

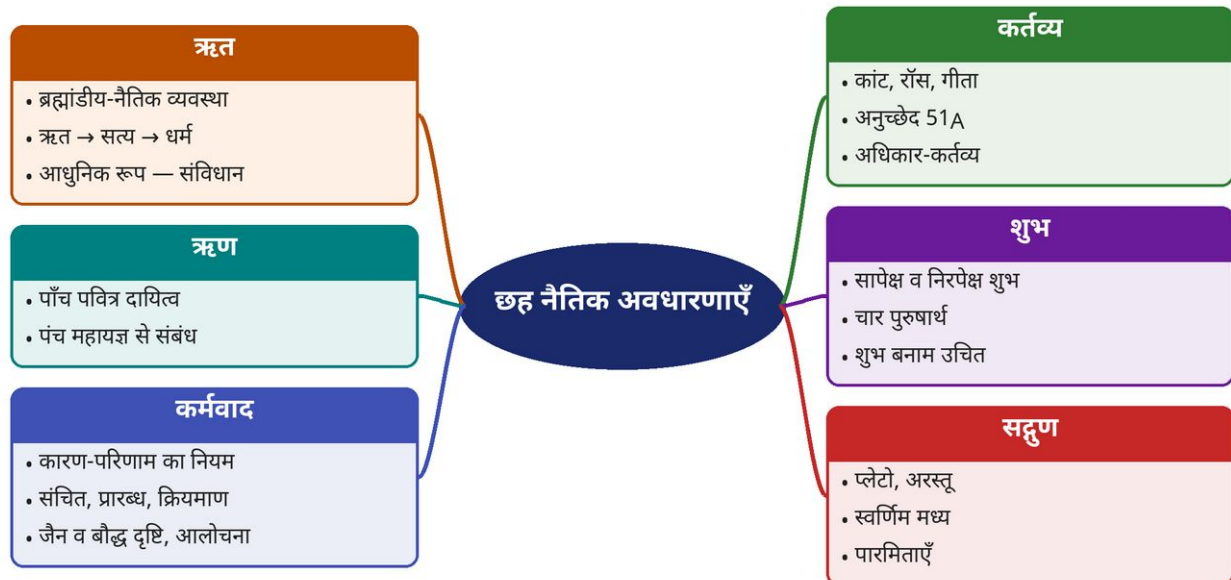
📖 शुरुआत एक सच्ची घटना से...

दिसंबर 2015 की एक सर्द सुबह थी। राजस्थान के जालौर जिले के तत्कालीन कलेक्टर डॉ. जितेन्द्र कुमार सोनी एक सरकारी स्कूल के निरीक्षण पर गए थे। वहाँ उन्होंने देखा कि कड़कड़ाती ठंड में कई बच्चे नंगे पैर या फटी-टूटी चप्पलों में स्कूल आए हैं। यह दृश्य देखकर उनसे रहा नहीं गया — उसी दिन उन्होंने अपनी जेब से बच्चों के लिए जूते खरीदकर बाँटवाए। पर जब पंचायत-स्तर पर सर्वे कराया गया तो पता चला कि जिले में हज़ारों बच्चे बिना ठीक जूतों के स्कूल जाते हैं। एक अफसर के लिए यह आँकड़ा किसी फ़ाइल में दर्ज कर आगे बढ़ जाने का मौका था, पर सोनी साहब ने इसे अपना कर्तव्य माना। उन्होंने आम जनता से चंदा जुटाने की अपील शुरू की — थोड़े ही दिनों में जिले के बस-मालिकों से लेकर विदेश में बैठे प्रवासी भारतीयों तक ने दान दिया। यह अभियान "चरण पादुका अभियान (Charan Paduka Abhiyaan)" कहलाया, जो जनवरी 2016 के पहले सप्ताह में औपचारिक रूप से शुरू हुआ, और देखते ही देखते जालौर से आगे बढ़कर राज्य के कई और ज़िलों तक पहुँच गया — इतना सराहा गया कि राजस्थान सरकार ने इससे प्रेरित होकर इसे व्यापक स्तर पर आगे बढ़ाया। सोनी साहब ने किसी कानून की बाध्यता से यह काम नहीं किया — उन्होंने बस यह महसूस किया कि हर इंसान अपने आस-पास के दूसरे इंसानों का ऋणी है, और यही ऋण चुकाना उनका फ़र्ज़ है। यही इस पूरे अध्याय की जड़ है — प्रशासक के हर सही फैसले के पीछे कोई न कोई गहरी नैतिक अवधारणा काम करती है, चाहे उसे इसका एहसास हो या न हो। यह अध्याय आपको ठीक उन्हीं जड़ों से मिलवाएगा — ऋत, ऋण, कर्मवाद, कर्तव्य, शुभ और सद्गुण।

☀️ यह अभियान कितना बड़ा बना?

सर्वे में पता चला कि ज़िले के लगभग ढाई हज़ार विद्यालयों में औसतन हर विद्यालय के करीब दस बच्चे नंगे पैर आते थे — यानी लगभग 25 हज़ार बच्चे। सोशल मीडिया पर अपील के बाद लगभग 15 दिनों में ही 30 हज़ार से अधिक विद्यार्थियों तक जूते पहुँच गए। अभियान का नियम बना कि सर्दी के लिए गणतंत्र दिवस तक और गर्मी के लिए स्वतंत्रता दिवस तक जूते बाँटे जाएँगे। मुख्यमंत्री ने इसे पूरे राज्य में दोहराने के निर्देश दिए, और 2020 की शुरुआत तक यह अभियान 1.76 लाख से अधिक विद्यार्थियों तक पहुँच चुका था। सोनी स्वयं इसे "जनता की योजना" कहते थे, जिसमें वे केवल एक सहायक की भूमिका में थे।

अध्याय 02 — एक नज़र में



चित्र 2.1: अध्याय 02 — एक नज़र में

कहानी: अध्याय की यात्रा — "सेठ धनराज जी का आखिरी बहीखाता"

(यह एक काल्पनिक कहानी है। इसके हर पन्ने में इस अध्याय का एक भाग छिपा है — इसे ध्यान से पढ़िए, पूरा अध्याय आपके सामने खुल जाएगा।)

बाड़मेर ज़िले में नए-नए उपखंड अधिकारी बने आदित्य लुट्टी में अपने पुश्तैनी गाँव लौटे। हवेली की पुरानी अलमारी साफ़ करते हुए उन्हें लाल कपड़े में लिपटी एक मोटी बही मिली। यह उनके स्वर्गीय दादा सेठ धनराज जी की थी, जो पूरे इलाक़े में ईमानदार व्यापारी के रूप में जाने जाते थे। आदित्य ने सोचा कि इसमें पुराने लेन-देन का हिसाब होगा। पर जब उन्होंने आखिरी पन्ने खोले, तो वहाँ पैसों का नहीं, **जीवन का हिसाब** लिखा था।

पहला पन्ना — "तराजू का नियम": दादाजी ने लिखा था — "सूरज रोज़ समय पर उगता है, ऋतुएँ अपने क्रम से आती हैं। दुकान का तराजू भी इसी व्यवस्था का हिस्सा है। जिस दिन तराजू झूठा तौलेगा, उस दिन केवल ग्राहक नहीं ठगा जाएगा, पूरी व्यवस्था टूटेगी।" आदित्य मुस्कराए — यही तो ऋतु है: प्रकृति और समाज की वह व्यवस्था जिसे कोई तोड़े तो अनृत होता है। आज के प्रशासन में संविधान और क़ानून यही "तराजू" हैं। (खंड 1 और 2)

दूसरा पन्ना — "पाँच उधार": इस पन्ने पर पाँच नाम लिखे थे। "धरती, पानी और सूरज का उधार; गुरुजी का उधार, जिन्होंने हिसाब सिखाया; माँ-बाप का उधार; गाँव वालों का उधार, जिन्होंने अकाल में साथ दिया; और गाय, पेड़ और पंछियों का उधार।" हर नाम के आगे लिखा था कि यह उधार कैसे चुकाया — कुआँ खुदवाकर, पाठशाला बनवाकर, माँ-बाप की सेवा करके, अकाल में अनाज बाँटकर, और ओरण में पेड़ लगाकर। आदित्य समझ गए — यह पाँच ऋणों (देव, ऋषि, पितृ, नृ और भूत ऋण) की सूची है। (खंड 3)

तीसरा पन्ना — "जमा, नामे और आगे का खाता": दादाजी ने कर्म को भी बही की भाषा में समझाया था — "पिछले सालों का जो जमा है, वह पूँजी है; उसमें से जो इस साल खर्च हो रहा है, वह तय है; और जो आज कमा रहा हूँ, वही कल की पूँजी बनेगा।" यही संचित, प्रारब्ध और क्रियमाण कर्म का भेद है। नीचे लिखा था — "कर्म का फल मिलता है, पर फल के डर से हाथ पर हाथ धरे बैठना भाग्यवाद है, कर्मवाद नहीं।" (खंड 4)

चौथा पन्ना — "तीन सवाल": एक कोने में तीन सवाल लिखे थे — "क्या सही है? क्यों करना है? कैसे करना है?" आदित्य को लगा जैसे दादाजी ने ऋतु, ऋण और कर्म का त्रिकोण बना दिया हो। (खंड 5)

पाँचवाँ पन्ना — "दुकान के नियम": "सुबह दुकान समय पर खोलना, वादा किया माल समय पर देना, और गलती हो तो नुकसान भरना" — आदित्य ने पढ़ा तो उन्हें लगा जैसे वे दार्शनिक डब्ल्यू.डी. रॉस के कर्तव्यों की सूची पढ़ रहे हों: वचन निभाना, क्षतिपूर्ति करना, कृतज्ञता, न्याय। उसी पन्ने पर लिखा था — "हज़र माँगने से पहले फ़र्ज़ निभाना।" यही कर्तव्य और अधिकार का रिश्ता है, और यही संविधान के मूल कर्तव्य भी सिखाते हैं। (खंड 6)

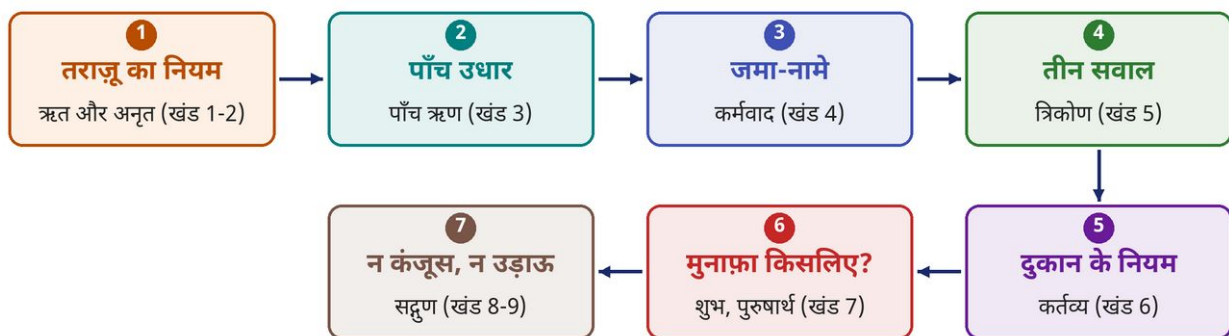
छठा पन्ना — "मुनाफ़ा किसलिए?": दादाजी ने लिखा था — "मुनाफ़ा सुख का साधन है, सुख नहीं। धर्म से कमाओ, ज़रूरत भर भोगो, और अंत में सब छोड़ने को तैयार रहो।" यह सापेक्ष और निरपेक्ष शुभ का अंतर था, और भारतीय परंपरा के चार पुरुषार्थ — धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष — का सार भी। (खंड 7)

सातवाँ पन्ना — "न कंजूस, न उड़ाऊ": आखिरी पंक्ति थी — "दान ऐसा कि घर भी चले और ज़रूरतमंद भी। साहस ऐसा कि अन्याय से डरो नहीं, पर बेवजह झगड़ो भी नहीं।" आदित्य चौंक गए — यह तो यूनानी दार्शनिक अरस्तू का स्वर्णिम मध्य है, जिसमें हर सद्गुण दो अतियों के बीच होता है। (खंड 8 और 9)

अगले दिन दफ़्तर जाते हुए आदित्य ने बही की एक फ़ोटो अपने फ़ोन की स्क्रीन पर लगा ली। उन्होंने तय किया कि हर फ़ाइल पर दस्तखत से पहले वे तीन बातें सोचेंगे — क्या यह व्यवस्था (ऋतु) के अनुरूप है, क्या इससे मैं अपना ऋण चुका रहा हूँ, और इसका फल (कर्म) किस पर क्या पड़ेगा। यही यात्रा अब आप इस अध्याय में करने जा रहे हैं।

🔑 **इस कहानी से सीख:** यह अध्याय सात पन्नों की तरह खुलता है — (1) ऋतु और अनृत, (2) पाँच ऋण, (3) कर्मवाद और उसके प्रकार, (4) ऋतु-ऋण-कर्म का त्रिकोण, (5) कर्तव्य और मूल कर्तव्य, (6) शुभ और पुरुषार्थ, (7) सद्गुण और स्वर्णिम मध्य।

बहीखाते के सात पन्ने — अध्याय के सात भाग



चित्र 2.2: बहीखाते के सात पन्ने — अध्याय के सात भाग

अध्याय विषय-सूची

1 नैतिक संप्रत्यय (Ethical Concepts) — एक परिचय	6 कर्तव्य (Duty) की अवधारणा
2 ऋतु (Rit / Rita) — ब्रह्मांडीय व्यवस्था की अवधारणा	7 शुभ (Good) की अवधारणा

3 ऋण (Rin) — पाँच पवित्र दायित्व

4 कर्मवाद (Karmavada) — क्रिया और उसके परिणाम का नियम

5 ऋत + ऋण + कर्मवाद — त्रिकोणीय संबंध

8 सद्गुण (Virtue) की अवधारणा

9 ऋत, ऋण, कर्मवाद, कर्तव्य, शुभ एवं सद्गुण — ऐतिहासिक यात्रा

1. नैतिक संप्रत्यय (Ethical Concepts) — एक परिचय

नैतिक संप्रत्यय वे मूलभूत मापदंड हैं जिनकी कसौटी पर एक सामान्य मनुष्य के ऐच्छिक आचरण (यानी जो उसने अपनी मर्जी से किया, मजबूरी में नहीं) का नैतिक मूल्यांकन किया जाता है। सीधी भाषा में कहें तो — जब भी हमें यह तय करना हो कि किसी काम को "सही" कहा जाए या "गलत", तो हम जिन कसौटियों का सहारा लेते हैं, वही नैतिक संप्रत्यय हैं।

◆ ये अवधारणाएँ मुख्यतः **आदर्शमूलक नीतिशास्त्र (Normative Ethics)** से जुड़ी हैं — क्योंकि ये सीधे बताती हैं कि व्यक्ति को कैसा आचरण करना चाहिए; इनके अर्थ, स्रोत और मूल आधार पर चर्चा **परा-नैतिकता (Meta Ethics)** के प्रश्नों से भी जुड़ सकती है (जैसे "शुभ का वास्तविक अर्थ क्या है")।

◆ इस अध्याय में हम छह प्रमुख नैतिक संप्रत्ययों को समझेंगे — **ऋत, ऋण, कर्मवाद, कर्तव्य, शुभ और सद्गुण**।

💡 **आसान भाषा में:** जैसे किसी पेड़ की जड़ें ज़मीन के नीचे छिपी रहती हैं, दिखती नहीं, पर पूरे पेड़ को खड़ा रखने का काम वही करती हैं — ठीक वैसे ही ये छह अवधारणाएँ हमारे रोज़मर्रा के नैतिक व्यवहार की जड़ें हैं, भले ही हम रोज़ इनका नाम न लें।

1.1 भारतीय और पाश्चात्य नैतिक संप्रत्यय — एक तुलना

इस अध्याय की छह अवधारणाओं में से पहली तीन — **ऋत, ऋण और कर्मवाद** — भारतीय चिंतन से आई हैं, जबकि बाकी तीन — **कर्तव्य, शुभ और सद्गुण** — पर भारतीय और पाश्चात्य, दोनों परंपराओं ने गहराई से विचार किया है। दोनों परंपराओं की दृष्टि में कुछ अंतर है, पर लक्ष्य एक ही है — मनुष्य को अच्छा जीवन जीने और सही निर्णय लेने की दिशा देना।

आधार	भारतीय दृष्टि	पाश्चात्य दृष्टि
नैतिकता का स्रोत	ब्रह्मांड की व्यवस्था (ऋत), धर्म, कर्म	तर्क (Reason), मानव स्वभाव, सामाजिक अनुबंध
मुख्य प्रश्न	मेरा धर्म या कर्तव्य क्या है? मैं किसका ऋणी हूँ?	सही कार्य कौन-सा है? अच्छा जीवन क्या है?
व्यक्ति और समाज	व्यक्ति प्रकृति, समाज और पूर्वजों से जुड़ा हुआ है	व्यक्ति की स्वतंत्रता और अधिकारों पर अधिक ज़ोर
अंतिम लक्ष्य	मोक्ष, निर्वाण, लोक-कल्याण	यूडेमोनिया (मानवीय उत्कर्ष), अधिकतम सुख, शुभ-संकल्प
उदाहरण	गीता का निष्काम कर्म, पाँच ऋण	कांट का कर्तव्य, अरस्तू का स्वर्णिम मध्य

2. ऋत (Rit / Rita) — ब्रह्मांडीय व्यवस्था की अवधारणा

🔍 आसान परिभाषा: ऋत (Rta)

📘 **परिभाषा:** ऋत (Rta) वैदिक साहित्य की वह अवधारणा है जो सत्य, नियमबद्धता और ब्रह्मांडीय-नैतिक व्यवस्था को व्यक्त करती है — यानी वह सत्य, धार्मिकता और प्राकृतिक व्यवस्था जो इस पूरे ब्रह्मांड को संचालित करती है। प्रसिद्ध दार्शनिक और भारत के दूसरे राष्ट्रपति डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन के अनुसार, "ऋत सत्य और धार्मिकता का मार्ग है।"

💡 **आसान भाषा में:** सोचिए — पृथ्वी के घूर्णन के कारण सूर्य प्रतिदिन पूर्व दिशा में उदित होता दिखाई देता है, ऋतुएँ एक तय क्रम में बदलती हैं, गुरुत्वाकर्षण के नियम से नदी ऊँचाई से नीचाई की ओर बहती है — यह सब बिना किसी के आदेश के अपने आप, एक तय नियम के तहत होता है। ध्यान रहे, ये वैज्ञानिक नियम हैं; वैदिक चिंतन इन्हीं से प्रेरणा लेकर एक व्यापक नैतिक-ब्रह्मांडीय व्यवस्था की कल्पना करता है — यही अनुशासित व्यवस्था ऋत है, यानी प्रकृति और जीवन का वह अलिखित संविधान जिसे हर कोई मानने को बाध्य है, चाहे वह इंसान हो या देवता। 🏠

🏠 **उदाहरण:** जैसे किसी शहर में ट्रैफिक सिग्नल का नियम सबके लिए एक जैसा होता है — चाहे कोई मंत्री हो या आम आदमी, लाल बत्ती पर सबको रुकना ही पड़ता है — ठीक वैसे ही ऋत भी किसी का पक्ष नहीं लेता, यह सबके लिए एक-समान लागू होता है।

2.1 ऋत शब्द की उत्पत्ति और विकास — ऋत से सत्य और धर्म तक

"ऋत" शब्द संस्कृत की "ऋ" धातु से बना है, जिसका अर्थ है **गति करना या चलना**। इसलिए ऋत का मूल भाव है — "चीज़ों के चलने का सही क्रम"। इसके विपरीत "धर्म" शब्द "धृ" धातु से बना है, जिसका अर्थ है **धारण करना या संभालना** — यानी जो समाज और जीवन को टिकाए रखे।

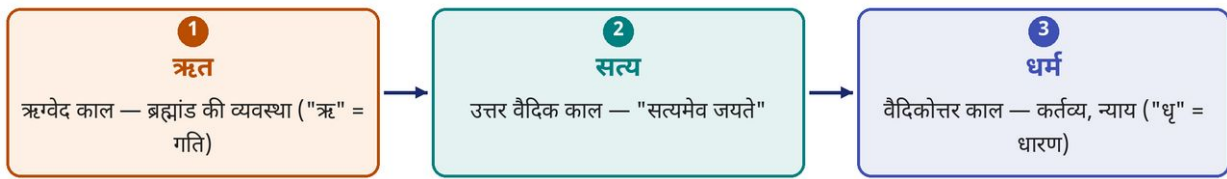
◆ **ऋग्वेद काल:** ऋत को प्रकृति का मूल नियम माना गया, जो जन्म, वृद्धि और क्षय — सबको नियंत्रित करता है। ऋग्वेद के कई सूक्त ऋत को "प्रकृति का मौलिक नियम" बताते हैं।

◆ **मित्र और वरुण:** वैदिक ऋषियों ने प्राकृतिक शक्तियों को देवताओं के रूप में देखा। **वरुण** को ऋत का मुख्य रक्षक (ऋतस्य गोपा) माना गया — वे भौतिक और नैतिक, दोनों व्यवस्थाओं के संरक्षक और न्याय के देवता थे। मित्र और वरुण को प्रायः एक साथ ऋत के पालनकर्ता के रूप में स्मरण किया गया।

◆ **उत्तर वैदिक काल:** धीरे-धीरे ऋत के स्थान पर "सत्य" शब्द प्रमुख हुआ। मुंडक उपनिषद् का वाक्य "सत्यमेव जयते" (सत्य की ही जीत होती है) आज भारत का राष्ट्रीय आदर्श-वाक्य है।

◆ **वैदिकोत्तर काल:** ऋत की जगह "धर्म" ने ले ली। धर्मशास्त्रों में धर्म का अर्थ केवल पूजा-पद्धति नहीं, बल्कि न्याय, सदाचार, कर्तव्य और सामाजिक व्यवस्था — सब कुछ हो गया। यानी ऋत एक तरह से धर्म का "पूर्वज" है।

नैतिक व्यवस्था की यात्रा — ऋत से धर्म तक



चित्र 2.3: नैतिक व्यवस्था की यात्रा — ऋत से धर्म तक

आसान परिभाषा: अनृत (Anṛta)

📖 **परिभाषा:** ऋत का विपरीत — वह आचरण या स्थिति जो प्राकृतिक, नैतिक या सामाजिक व्यवस्था को तोड़ती है; वैदिक साहित्य में इसे असत्य और अव्यवस्था के रूप में देखा गया।

💡 **आसान भाषा में:** जो काम "तय क्रम" या "सही नियम" को तोड़ दे, वही अनृत है — जैसे झूठ, धोखा, मिलावट या प्रकृति का अंधाधुंध दोहन। 🏠 **उदाहरण:** ट्रैफिक सिग्नल सबके लिए व्यवस्था (ऋत) है; लाल बत्ती तोड़कर निकल जाना अनृत है, जिससे पूरी व्यवस्था और दूसरों की जान खतरे में पड़ती है।

2.2 ऋत की तीन परतें (आयाम)

ऋत सिर्फ एक धार्मिक शब्द नहीं है — समझने की सुविधा के लिए इसे नीचे दिए तीन आयामों में देखा जा सकता है (यह वैदिक साहित्य का कोई स्थिर/आधिकारिक त्रिभाजन नहीं, बल्कि एक शिक्षण-वर्गीकरण है):

आयाम	अर्थ	उदाहरण
भौतिक/ब्रह्मांडीय (Cosmological)	सौरमंडल की गति, ऋतुओं का बदलना, गुरुत्वाकर्षण की दिशा — प्रकृति के भौतिक नियम।	पृथ्वी का सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करना, दिन-रात का बदलना।
नैतिक/सामाजिक (Moral)	धर्म, कर्म, जीवन के आश्रम, बौद्ध धर्म का "धम्म" — मानव-आचरण के नियम।	चार आश्रम व्यवस्था (ब्रह्मचर्य-गृहस्थ-वानप्रस्थ-संन्यास), कर्म-सिद्धांत।
कर्मकांड (Ritualistic)	धार्मिक क्रियाओं का निश्चित क्रम और अनुशासन।	यज्ञ की विधि, पूजा-पद्धति का तय क्रम।

2.3 ऋग्वेद में ऋत — कुछ महत्वपूर्ण संदर्भ

- ◆ ऋग्वेद 10.133.6 में प्रार्थना है — "ऋत के मार्ग पर हमें ले चलो" (सत्य और व्यवस्था के रास्ते पर चलने की कामना)।
- ◆ "ऋतस्य गोपा" — वरुण देवता को ऋत का रक्षक कहा गया है, और भगवान विष्णु को ऋत का प्रवर्तक (शुरुआत करने वाला) माना जाता है।
- ◆ सबसे दिलचस्प बात — वेदों में यह भी कहा गया है कि खुद देवताओं को भी ऋत का पालन करना पड़ता है। यानी ऋत देवताओं से भी बड़ा है — कोई भी शक्ति इस व्यवस्था से ऊपर नहीं।

2.4 ऋत की तीन विशेषताएँ

विशेषता	सरल भाषा में अर्थ	उदाहरण
1. गति (Gati)	निरंतर परिवर्तन या प्रवाह — रुकना नहीं, बहते रहना।	ऋतुओं का बदलना, नदी का लगातार बहना।
2. संघटन (Sanghatan)	परस्पर निर्भर हिस्सों पर टिकी व्यवस्था — एक हिस्सा हटे तो पूरा तंत्र गड़बड़ा जाए।	पारिस्थितिकी तंत्र (Ecosystem) — एक प्रजाति खत्म हो तो पूरी खाद्य-श्रृंखला प्रभावित।
3. नियति (Niyati)	एक तय, अंतर्निहित क्रम — जो अपने-आप एक ढर्रे में चलता रहता है।	गुरुत्वाकर्षण के नियमों के अंतर्गत ग्रहों की नियमित कक्षीय गति।

ऋत — एक नज़र में



चित्र 2.4: ऋत — एक नज़र में

2.5 प्रशासन में ऋत — असली कहानियों से समझिए

ऋत सिर्फ किताबी अवधारणा नहीं है — एक प्रशासक के रोज़मर्रा के फैसलों में यह सीधे लागू होती है। दो उदाहरण देखिए:

☀ कहानी 1 — जब ऋत तोड़ने की कीमत चुकानी पड़ी (चंदा कोचर मामला)

आईसीआईसीआई बैंक (ICICI Bank) की एमडी व सीईओ रहीं **चंदा कोचर** ने 2009 में वीडियोकॉन समूह को 300 करोड़ रुपये का कर्ज़ मंज़ूर करने वाली समिति की अध्यक्षता की थी। बाद में जाँच में सामने आया कि इसके तुरंत बाद वीडियोकॉन से जुड़ी कंपनियों से करीब 64 करोड़ रुपये उनके पति की कंपनी "न्यूपावर रिन्यूएबल्स" में पहुँचे — यानी हितों का टकराव (Conflict of Interest), जो बैंक को कभी नहीं बताया गया। अक्टूबर 2018 में उन्हें पद छोड़ना पड़ा, और जनवरी 2019 में आंतरिक जाँच (न्यायमूर्ति श्रीकृष्ण समिति) में उन्हें बैंक की आचार-संहिता का उल्लंघन करने का दोषी पाया गया। 2022 में सीबीआई ने उन्हें और उनके पति को गिरफ्तार किया, और जुलाई 2025 के एक अपीलीय न्यायाधिकरण के आदेश में प्रवर्तन निदेशालय (ED) के 64 करोड़ रुपये के "क्विड-प्रो-क्वो" (लेन-देन के बदले फायदा) संबंधी आरोपों को प्रथमदृष्टया आधार माना गया — यह अंतिम आपराधिक दोषसिद्धि नहीं है, और संबंधित न्यायिक कार्यवाही अभी भी लंबित है। यह कहानी बताती है कि बैंकिंग और प्रशासन के नियम (यानी संस्थागत ऋत) चाहे कितने भी शक्तिशाली व्यक्ति के लिए क्यों न हों, उनका उल्लंघन देर-सबेर सामने आ ही जाता है।

☀ कहानी 2 — अपने स्वभाव के विरुद्ध जाना भी अनृत है

ऋत का एक गहरा सबक यह भी है कि हर व्यक्ति की अपनी एक "स्वाभाविक प्रकृति" (Swabhav) होती है, और उसके विरुद्ध जाकर काम करना भी एक तरह का अनृत (व्यवस्था से भटकाव) है। कोटा जैसे कोचिंग हब में हर साल हज़ारों छात्र सिर्फ परिवार या समाज के दबाव में इंजीनियरिंग-मेडिकल जैसे क्षेत्र चुन लेते हैं, भले ही उनकी रुचि और क्षमता कहीं और हो — नतीजा यह होता है कि सालों की मेहनत के बावजूद न मन लगता है, न नतीजा मिलता है, और भारी मानसिक तनाव झेलना पड़ता है। यही कारण है कि नीतिशास्त्र में कहा जाता है — अपने सच्चे स्वभाव ("स्व-धर्म") के अनुसार काम चुनना ही ऋत के पालन का एक रूप है, और इसके विपरीत जाना दुःख का कारण बनता है।

2.6 आधुनिक प्रशासन में ऋत के रूप

वेदों का ऋत आज के लोकतांत्रिक प्रशासन में कई रूपों में दिखाई देता है। जिस तरह ऋत में देवता भी नियम से ऊपर नहीं थे, उसी तरह आधुनिक **विधि के शासन (Rule of Law)** में कोई भी व्यक्ति — चाहे वह कितना भी बड़ा पदाधिकारी हो — क़ानून से ऊपर नहीं है।

◆ **संविधान और विधि का शासन:** संविधान आधुनिक "ऋत" है — यह तय करता है कि सत्ता कैसे चलेगी और उसकी सीमाएँ क्या हैं।

◆ **उचित प्रक्रिया (Due Process):** किसी भी निर्णय में तय प्रक्रिया का पालन करना — यानी जिस व्यक्ति पर निर्णय का असर पड़ेगा उसे अपनी बात रखने (सुनवाई) का अवसर देना, निर्णय के कारण लिखित में दर्ज करना, और उसे ऊपर अपील करने का अधिकार देना। प्रक्रिया टूटे तो निर्णय सही होते हुए भी अन्यायपूर्ण लगता है।

◆ **नियमितता और समयबद्धता:** जैसे ऋतुएँ समय पर आती हैं, वैसे ही सेवाओं की समय-सीमा तय करना — राजस्थान लोक सेवाओं के प्रदान की गारंटी अधिनियम, 2011 और नागरिक अधिकार-पत्र (Citizen Charter) इसी भावना के उदाहरण हैं — इनमें तय किया गया है कि कौन-सी सेवा (जैसे प्रमाण-पत्र या कनेक्शन) कितने दिनों में मिलेगी, और समय पर सेवा न देने वाले अधिकारी की जवाबदेही तय होती है।

◆ **पारिस्थितिक संतुलन:** प्रकृति के चक्र को न तोड़ना भी ऋत का पालन है। सतत विकास (Sustainable Development) का अर्थ है ऐसा विकास, जो आज की ज़रूरतें पूरी करे पर आने वाली पीढ़ियों के लिए संसाधन (जल, जंगल, ज़मीन) भी बचाकर रखे — इसलिए इसे ऋत की आधुनिक भाषा कहा जा सकता है।

◆ **संस्थाओं की स्वायत्तता:** निर्वाचन आयोग, नियंत्रक-महालेखा परीक्षक जैसी संस्थाओं का नियमानुसार स्वतंत्र काम करना पूरी व्यवस्था को संतुलित रखता है, क्योंकि ये संस्थाएँ सरकार के दबाव से मुक्त रहकर चुनाव और सरकारी खर्च की निष्पक्ष जाँच करती हैं — ठीक वैसे ही जैसे ऋत में हर शक्ति एक नियम से बँधी रहती है।

ऋत बनाम अनृत — प्रशासन में

ऋत (व्यवस्था)	बनाम	अनृत (अव्यवस्था)
नियम व तथ्य के आधार पर	निर्णय	सिफ़ारिश, दबाव, पक्षपात से
पारदर्शी, लिखित, समयबद्ध	प्रक्रिया	मनमानी, गोपनीय, टालमटोल
सतत विकास, संतुलन	प्रकृति	अंधाधुंध दोहन, प्रदूषण
भरोसा, शांति, प्रगति	परिणाम	अविश्वास, असंतोष, संकट

चित्र 2.5: ऋत बनाम अनृत — प्रशासन में

कहानी: "बारी का पानी" — नहर की व्यवस्था और एक फ़ोन कॉल

श्रीगंगानगर ज़िले के एक नहरी क्षेत्र में सुरेंद्र (काल्पनिक नाम) सहायक अभियंता थे। इस इलाक़े में खेतों तक पानी वाराबंदी से पहुँचता है — यानी हर किसान की बारी का दिन और समय पहले से तय होता है। नहर के अंतिम छोर (टेल) पर बसे छोटे किसानों के लिए यह बारी ही जीवन-रेखा है, क्योंकि ऊपर के किसान ज़्यादा पानी ले लें तो नीचे तक पानी पहुँचता ही नहीं।

उस साल बारिश कम हुई थी। एक रात सुरेंद्र के पास एक प्रभावशाली बड़े किसान का फ़ोन आया — "साहब, मेरी कपास सूख रही है। बस दो दिन मोघा (आउटलेट) थोड़ा बड़ा कर दो, बारी से पहले पानी दे दो। आपका ध्यान रखेंगे।" अगले दिन एक बड़े नेता के कार्यालय से भी "देख लेने" का संदेश आया।

सुरेंद्र जानते थे कि बड़े किसान की फ़सल सचमुच संकट में थी — उनकी चिंता झूठी नहीं थी। पर अगर बारी तोड़ी जाती, तो टेल के पचास से ज़्यादा छोटे किसानों की गेहूँ की बुवाई मारी जाती, और अगले साल से हर कोई बारी तोड़ने के लिए सिफ़ारिश लाता। एक व्यक्ति की मदद के लिए पूरी व्यवस्था (ऋत) टूट जाती।

उन्होंने बारी नहीं तोड़ी। पर वे संवेदनहीन भी नहीं बने। उन्होंने बड़े किसान को बताया कि नियम के अनुसार सूखे की स्थिति में जल-उपयोक्ता संगम (किसानों की समिति) की बैठक बुलाकर सबकी सहमति से अतिरिक्त पानी की "विशेष बारी" तय की जा सकती है। बैठक हुई, सबके सामने पानी की उपलब्धता के आँकड़े रखे गए, और सबकी सहमति से हर खेत के लिए समय थोड़ा-थोड़ा घटाकर एक छोटी विशेष बारी निकाली गई — टेल के किसानों का हिस्सा भी सुरक्षित रहा।

साथ ही उन्होंने मोघों की रात में जाँच शुरू करवाई, ताकि कोई चोरी-छिपे आउटलेट बड़ा न करे। उस मौसम में पहली बार टेल तक पूरा पानी पहुँचा। गाँव की चौपाल पर एक बुजुर्ग किसान ने कहा — "जिस दिन पानी की बारी ईमानदारी से चलती है, उस दिन किसी को सिफ़ारिश की ज़रूरत नहीं पड़ती।"

इस कहानी से सीख: ऋत का अर्थ है ऐसी व्यवस्था, जो सबके साथ समान रूप से चले — ताक़तवर और कमज़ोर, दोनों के लिए। प्रशासक का काम व्यवस्था को तोड़कर किसी एक की मदद करना नहीं, बल्कि व्यवस्था के भीतर रहकर सबकी भागीदारी से संकट का हल निकालना है। सुरेंद्र ने नियम (ऋत), करुणा, पारदर्शिता और सामूहिक निर्णय — चारों को साथ रखा।

ऋत और प्रशासनिक उत्कृष्टता: संविधान और क़ानून आज के युग का "आधुनिक ऋत" हैं। करोड़ों मतदाताओं का शांतिपूर्ण चुनाव इसीलिए संभव होता है, क्योंकि सब संविधान और निर्वाचन आयोग की तय व्यवस्था (ऋत) का पालन करते हैं। साथ ही इसरो (ISRO) जैसी संस्थाएँ ब्रह्मांड के अनजाने नियमों को खोजने में जुटी हैं — यानी ऋत केवल बंधन नहीं, नई खोज की प्रेरणा भी है।

याद रखें — ऋत और अनृत

जब व्यक्ति और समाज ऋत (व्यवस्था) का पालन करते हैं, तो जीवन में सुख, शांति और प्रगति आती है; और जब अनृत (ऋत के विपरीत आचरण) बढ़ता है, तो दुःख और अव्यवस्था फैलती है। महात्मा गांधी ने 1934 के बिहार भूकंप को छुआछूत (अस्पृश्यता) रूपी "अनृत" का दैवीय दंड बताया था — जिस पर रवींद्रनाथ टैगोर ने खुले तौर पर असहमति जताते हुए कहा कि प्राकृतिक घटनाओं को नैतिक पाप से जोड़ना अवैज्ञानिक सोच है। (इस बहस की पूरी कहानी खंड 4.4 में — जहाँ कर्मवाद की आलोचना पर चर्चा है)।

3. ऋण (Rin) — पाँच पवित्र दायित्व

आसान परिभाषा: ऋण (Rin)

परिभाषा: वैदिक नीतिशास्त्र के अनुसार ऋण का अर्थ है — नैतिक दायित्व (Moral Debt/Obligation)। मान्यता है कि हर मनुष्य जन्म लेते ही कुछ ऋणों के साथ पैदा होता है, क्योंकि उसे जीवन, ज्ञान, परिवार, समाज और प्रकृति से बहुत कुछ मुफ्त में मिला है — और इसे चुकाना उसका नैतिक कर्तव्य है।

आसान भाषा में: जैसे किसी से उधार पैसा लिया हो तो उसे लौटाना हमारी ज़िम्मेदारी होती है — ठीक वैसे ही हमें अपना जीवन, शिक्षा, परिवार और प्रकृति मुफ्त में मिली है, और इसे "लौटाने" का तरीका है — दूसरों की सेवा करना, आगे बढ़ाना, संभालकर रखना। यह ऋण पैसों

का नहीं, कृतज्ञता (Gratitude) का है।  **उदाहरण:** जैसे कोई सरकारी टीचर जिसने खुद सरकारी स्कूल में पढ़कर आईएएस बनने का सपना देखा हो, बाद में उसी तरह के गरीब बच्चों को मुफ्त में पढ़ाए — वह असल में अपने ऊपर के 'ऋषि ऋण' यानी ज्ञान के ऋण को आगे बढ़ाकर चुका रहा होता है।

आसान परिभाषा:

 **परिभाषा:**  मूल स्रोत: तैत्तिरीय संहिता में तीन मूल ऋणों — देव ऋण, ऋषि ऋण, पितृ ऋण — का उल्लेख मिलता है। बाद की भारतीय परंपरा और आधुनिक नैतिक व्याख्याओं में समस्त मानवता (नृ ऋण) तथा समस्त प्राणिजगत (भूत ऋण) के प्रति उत्तरदायित्व को जोड़कर पाँच ऋणों का विस्तृत रूप समझाया जाता है — अलग-अलग ग्रंथों/व्याख्याओं में इनके स्रोत भिन्न-भिन्न बताए गए हैं।

 **आसान भाषा में:**  **उदाहरण:**

ऋण का प्रकार	हम किसके ऋणी हैं?	चुकाने का तरीका
1. देव ऋण	देवताओं (प्राकृतिक शक्तियों) का — सूर्य, जल, वायु, पृथ्वी	यज्ञ, पूजा, प्रकृति-संरक्षण
2. ऋषि ऋण	गुरुओं और विद्वानों का — जिनसे ज्ञान मिला	ज्ञान अर्जन, प्रचार, गुरु-सम्मान
3. पितृ ऋण	पूर्वजों व माता-पिता का — जीवन देने के लिए	संतानोत्पत्ति, माता-पिता की सेवा
4. नृ ऋण	समस्त मानवता का	दान, करुणा, समानता, सेवा
5. भूत ऋण	समस्त प्राणियों व प्रकृति का	प्रदूषण-मुक्त पर्यावरण, वन-संरक्षण

3.1 ग्रंथों में ऋण — तीन से पाँच तक, और पंच महायज्ञ

ऋण की अवधारणा धीरे-धीरे विकसित हुई। सबसे पहले तीन ऋण बताए गए, फिर चार, और बाद की परंपरा में पाँच। इसी के साथ गृहस्थ के लिए **पंच महायज्ञ** — यानी पाँच दैनिक कर्तव्य — भी बताए गए, जो इन ऋणों से मिलते-जुलते हैं:

◆ **तैत्तिरीय संहिता (6.3.10.5):** मनुष्य तीन ऋणों के साथ जन्म लेता है — ऋषियों का ऋण ब्रह्मचर्य और अध्ययन से, देवताओं का ऋण यज्ञ से, और पितरों का ऋण संतान से चुकाया जाता है।

◆ **शतपथ ब्राह्मण (1.7.2):** इन तीन ऋणों में एक चौथा जोड़ा गया — **मनुष्यों का ऋण**, जिसे अतिथि-सत्कार से चुकाया जाता है। महाभारत में भी पांडु इन्हीं चार ऋणों का उल्लेख करते हैं।

◆ **मनुस्मृति (3.67-70):** गृहस्थ के लिए पाँच महायज्ञ बताए गए — ब्रह्म यज्ञ (वेद-अध्ययन), देव यज्ञ (होम), पितृ यज्ञ (तर्पण-श्राद्ध), नृ/मनुष्य यज्ञ (अतिथि-सत्कार) और भूत यज्ञ (सभी प्राणियों के लिए अन्न का भाग)।

ऋण	मिलता-जुलता महायज्ञ	आज के जीवन में अर्थ
ऋषि ऋण	ब्रह्म यज्ञ — स्वाध्याय, अध्यापन	पढ़ना, पढ़ाना, ज्ञान को आगे बढ़ाना
देव ऋण	देव यज्ञ — होम, यज्ञ	प्रकृति के प्रति कृतज्ञता, संसाधनों की रक्षा
पितृ ऋण	पितृ यज्ञ — तर्पण, श्राद्ध	माता-पिता की सेवा, परिवार की परंपरा निभाना
नृ ऋण	नृ/मनुष्य यज्ञ — अतिथि-सत्कार	ज़रूरतमंद की मदद, जन-सेवा
भूत ऋण	भूत यज्ञ — प्राणियों के लिए अन्न	पशु-पक्षी, पेड़-पौधों और पर्यावरण की रक्षा

 **ध्यान रहे:** ऋण और महायज्ञ आपस में मिलते-जुलते हैं, पर पूरी तरह एक नहीं हैं। ऋण जन्म से मिली "देनदारी" है, जबकि महायज्ञ रोज़ के जीवन में होने वाली अनजानी हानियों के प्रायश्चित्त और कृतज्ञता के कर्तव्य हैं। सरल शब्दों में — ऋण बताता है कि हम किसके "कर्जदार" हैं, और महायज्ञ बताते हैं कि यह कर्ज रोज़ कैसे चुकाया जाए।

“ माता को देवता मानो, पिता को देवता मानो, आचार्य को देवता मानो, अतिथि को देवता मानो। (मातृदेवो भव। पितृदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिदेवो भव।) ” — तैत्तिरीय उपनिषद् (1.11)

पाँच ऋण — किसके ऋणी, कैसे चुकाएँ?

पाँच पवित्र दायित्व

देव ऋण

प्रकृति की शक्तियाँ →
यज्ञ, संरक्षण

ऋषि ऋण

गुरु, ज्ञान → पढ़ना-पढ़ाना

पितृ ऋण

माता-पिता, पूर्वज → सेवा

नृ ऋण

मानवता → दान,
जन-सेवा

भूत ऋण

जीव-जगत → पर्यावरण
रक्षा

चित्र 2.6: पाँच ऋण — किसके ऋणी, कैसे चुकाएँ?

3.2 देव ऋण (Dev Rin) — प्रकृति और दैवीय शक्तियों का ऋण

◆ सूरज की रोशनी, स्वच्छ हवा, पानी, ज़मीन — यह सब हमें बिना कुछ चुकाए प्राकृतिक शक्तियों से मिला है, इसलिए हम इनके ऋणी हैं।

◆ चुकाने का मार्ग — "यज्ञेन देवेभ्यः" यानी यज्ञ, ध्यान और प्रकृति की सेवा के रूप में इस ऋण को उतारना।

💡 **आसान भाषा में:** आज के प्रशासनिक संदर्भ में इसे यूँ समझें — नमामि गंगे अभियान के तहत नदियों की सफाई, या राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति 2017 में योग को बढ़ावा देना — दोनों ही असल में प्रकृति के प्रति हमारे कृतज्ञता-भाव (देव ऋण) को ही आधुनिक भाषा में दोहराते हैं।

3.3 ऋषि ऋण (Rishi Rin) — ज्ञान का ऋण

◆ वेद, उपनिषद, आधुनिक विज्ञान, गुरुओं और शिक्षकों से मिला हर ज्ञान — यह सब ऋषि ऋण के दायरे में आता है।

◆ चुकाने का मार्ग — "ब्रह्मचर्येण ऋषिभ्यः" यानी ब्रह्मचर्य (अनुशासित विद्यार्थी-जीवन) में मन लगाकर ज्ञान को खुद अर्जित करना और फिर उसे दूसरों तक आगे फैलाना।

☀ कहानी — दो शिक्षिकाओं ने कैसे अपना ऋषि ऋण चुकाया

5 सितंबर 2023 को राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू ने राजस्थान की दो शिक्षिकाओं को राष्ट्रीय शिक्षक पुरस्कार से सम्मानित किया। जोधपुर की **डॉ. शीला असोपा** ने ग्रामीण इलाकों की छात्राओं को तकनीक (ICT) के ज़रिए पढ़ाने के साथ-साथ स्वास्थ्य, वर्षा-जल संचयन और विशेष ज़रूरतों वाले बच्चों की शिक्षा पर भी काम किया। वहीं अलवर की **आशा रानी सुमन** को नवाचार-आधारित शिक्षण-पद्धति के लिए सम्मानित किया गया। ये दोनों शिक्षिकाएँ बताती हैं कि ऋषि ऋण चुकाने का मतलब सिर्फ किताबी ज्ञान बाँटना नहीं, बल्कि उस ज्ञान को समाज के सबसे पिछड़े वर्ग तक, सबसे रचनात्मक तरीके से पहुँचाना है।

☀ ऋषि ऋण — एक शिक्षक, जिसने समुद्र के किनारे सपना बो दिया

रामेश्वरम के एक छोटे विद्यालय में पाँचवीं कक्षा के शिक्षक **शिव सुब्रमण्य अय्यर** पक्षियों के उड़ने का विषय पढ़ा रहे थे। बच्चों को बात समझ नहीं आई, तो वे पूरी कक्षा को शाम के समय समुद्र के किनारे ले गए और उड़ते हुए समुद्री पक्षियों को दिखाकर समझाया कि वे पंख कैसे फैलाते और दिशा कैसे बदलते हैं।

उस दिन एक बच्चे के मन में उड़ान का सपना जाग गया। वही बच्चा आगे चलकर **डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम** बना — भारत के मिसाइल कार्यक्रम का प्रमुख वैज्ञानिक और देश का राष्ट्रपति। कलाम जीवन भर अपने इस शिक्षक को याद करते रहे और स्वयं भी अंत तक विद्यार्थियों को पढ़ाते रहे। 27 जुलाई 2015 को शिलांग में विद्यार्थियों को व्याख्यान देते हुए ही उनका देहांत हुआ। ऋषि ऋण चुकाने का इससे सुंदर उदाहरण कम मिलता है — जो ज्ञान मिला, उसे आखिरी साँस तक आगे बाँटते रहना।

3.4 पितृ ऋण (Pitra Rin) — पूर्वजों और माता-पिता का ऋण

◆ हमारा अस्तित्व ही हमारे पूर्वजों और माता-पिता की देन है — चाहे वे जीवित हों या दिवंगत।

◆ चुकाने का मार्ग — संतानोत्पत्ति, श्राद्ध-कर्म, और सबसे ज़रूरी — जीवित माता-पिता की सेवा और सम्मान।

💡 **आसान भाषा में:** रामायण में भगवान राम का प्रसंग इसका सबसे प्रसिद्ध उदाहरण है — रघुकुल की "प्राण जाहूँ बरु बचनु न जाई" वाली रीति निभाते हुए उन्होंने पिता को दिए वचन को अपने प्राणों से भी ऊपर रखा। आज राजस्थान के पुष्कर में हर साल हज़ारों लोग अपने पूर्वजों का पिंडदान करने आते हैं — मान्यता है कि स्वयं भगवान राम ने भी यहीं अपने पिता दशरथ का पिंडदान किया था।

3.5 नृ ऋण (Nri Rin) — समस्त मानवता का ऋण

◆ हर व्यक्ति समाज के दूसरे लोगों का ऋणी है — क्योंकि हम अकेले नहीं, एक-दूसरे की मदद से ही जीवन चला पाते हैं।

◆ चुकाने का मार्ग — करुणा, दान, हर इंसान का सम्मान, और गांधीजी का प्रसिद्ध "तावीज़ (Talisman)" सिद्धांत — जब भी शक में हो कि कोई काम सही है या नहीं, याद करो कि इससे सबसे गरीब और कमज़ोर व्यक्ति को क्या फायदा होगा।

☀ पूरी कहानी अध्याय की शुरुआत में — डॉ. जितेन्द्र कुमार सोनी का चरण पादुका अभियान

इस अध्याय की शुरुआत में आप जालौर (राजस्थान) के कलेक्टर डॉ. जितेन्द्र कुमार सोनी की पूरी कहानी पढ़ चुके हैं — कैसे एक स्कूल-निरीक्षण में नंगे पैर बच्चों को देखकर उन्होंने चंदा जुटाकर "चरण पादुका अभियान" शुरू किया, जो आगे चलकर लाखों बच्चों तक पहुँचा और राज्य सरकार

की आधिकारिक योजना बन गया। यह नृ ऋण (मानवता के प्रति ऋण) का सबसे जीवंत उदाहरण है — किसी कानून ने उन्हें ऐसा करने के लिए बाध्य नहीं किया था, सिर्फ एक इंसान होने के नाते दूसरे इंसानों के प्रति ज़िम्मेदारी के एहसास ने यह करवाया।

3.6 भूत ऋण (Bhut Rin) — प्रकृति और समस्त प्राणियों का ऋण

- ◆ हमारा शरीर पंच महाभूतों (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश) से बना है, इसलिए हम समस्त वनस्पतियों और जीव-जंतुओं के भी ऋणी हैं।
- ◆ चुकाने का मार्ग — पर्यावरण को प्रदूषण से मुक्त रखना, वनों और जीव-जंतुओं की रक्षा करना, और अपरिग्रह (ज़रूरत से ज़्यादा न रखना) अपनाना — क्योंकि हम जितना कम संग्रह और उपभोग करेंगे, प्रकृति पर उतना ही कम बोझ पड़ेगा।

☀ कहानी — जब 363 लोगों ने पेड़ों के लिए अपनी जान दे दी (खेजड़ली बलिदान)

सन् 1730 में जोधपुर रियासत के महाराजा अभयसिंह को अपने महल के निर्माण के लिए चूना जलाने को लकड़ी चाहिए थी, और सैनिक खेजड़ली गाँव (जोधपुर के पास) पहुँचे — जहाँ बिश्नोई समुदाय के लोग खेजड़ी के पेड़ों को पवित्र मानकर पूजते थे। **अमृता देवी बिश्नोई** नाम की महिला ने पेड़ काटने का विरोध करते हुए कहा — "सिर सांटे रूखडो रहे तो भी सस्तो जाण" (यानी अगर मेरा सिर देकर भी पेड़ बच जाए, तो यह सस्ता सौदा है) — और उसने खुद एक पेड़ से लिपटकर अपनी जान दे दी। उसे देखकर गाँव के बाकी लोग भी एक-एक करके पेड़ों से लिपटते गए, और अंततः 363 बिश्नोई पुरुष-महिलाएँ पेड़ों की रक्षा करते हुए बलिदान हो गए। जब यह खबर महाराजा तक पहुँची तो उन्होंने तुरंत पेड़ काटने का आदेश वापस ले लिया और बिश्नोई गाँवों में पेड़ काटने व शिकार करने पर हमेशा के लिए रोक लगा दी। यह घटना आज भी दुनिया के सबसे पहले पर्यावरण-संरक्षण आंदोलनों में गिनी जाती है — भूत ऋण का इससे बड़ा उदाहरण मिलना मुश्किल है।

☀ भूत ऋण — एक आदमी, जिसने अकेले जंगल उगा दिया

असम में ब्रह्मपुत्र नदी के एक रेतीले टापू पर 1979 में बाढ़ के बाद किशोर **जादव पायेंग** ने देखा कि गर्म रेत पर पेड़ों की छाया न होने से बहुत-से साँप मर गए थे। इस दृश्य ने उन्हें भीतर तक हिला दिया। उन्होंने बाँस के लगभग बीस पौधे लगाए और फिर हर दिन पेड़ लगाते रहे। लगभग चार दशकों में वह वीरान रेतीला टापू करीब **550 हेक्टेयर** के घने जंगल में बदल गया, जिसे आज उनके नाम पर **मोलाई वन** कहा जाता है। इसमें बाघ, गैंडे, सैकड़ों हिरण, अनेक पक्षी आते हैं और हाथियों का एक बड़ा झुंड हर साल कई महीने यहाँ रहता है। उन्हें "भारत का वन-पुरुष" (Forest Man of India) कहा गया और 2015 में **पद्मश्री** से सम्मानित किया गया। किसी कानून ने उनसे यह नहीं करवाया — यह प्रकृति और प्राणियों के प्रति ऋण (भूत ऋण) चुकाने का भाव था।

“ इस संसार में जो कुछ भी है, वह सब ईश्वर से व्याप्त है; इसलिए त्याग-भाव से उपभोग करो, किसी के धन का लालच मत करो। (ईशा वास्यमिदं सर्वं... तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।) ” — ईशोपनिषद (मंत्र 1)

💡 **ऋणानुबंध:** मान्यता है कि जो व्यक्ति इस जन्म में अपना ऋण नहीं चुकाता, उसे अगले जन्म में उन्हीं लोगों के हाथों कष्ट सहना पड़ता है जिनका ऋण बाकी रह गया — इसे "ऋणानुबंध" कहा जाता है। मनुस्मृति (श्लोक 6.35) में भी कहा गया है कि तीनों मूल ऋण (देव, ऋषि, पितृ) चुकाने के बाद ही मोक्ष संभव है।

📖 कहानी: "ओरण की ज़मीन" — विकास और प्रकृति के बीच एक तहसीलदार

जैसलमेर ज़िले की एक तहसील में **कविता** (काल्पनिक नाम) तहसीलदार थीं। एक बड़ी सौर ऊर्जा परियोजना के लिए सरकारी भूमि आवंटन का प्रस्ताव उनकी टेबल पर आया। नक्शे में जो ज़मीन "बंजर सरकारी भूमि" लिखी थी, वहाँ जाकर देखा तो वह गाँव का सदियों पुराना **ओरण** निकला — देवता के नाम पर छोड़ी गई वह पवित्र भूमि, जहाँ कोई पेड़ नहीं काटता और जहाँ गाँव के पशु चरते हैं। वहाँ खेजड़ी और जाल के पुराने पेड़ थे, एक प्राचीन नाडी (तालाब) थी, और गोडावण (ग्रेट इंडियन बस्टर्ड) जैसे पक्षी भी कभी-कभी दिख जाते थे।

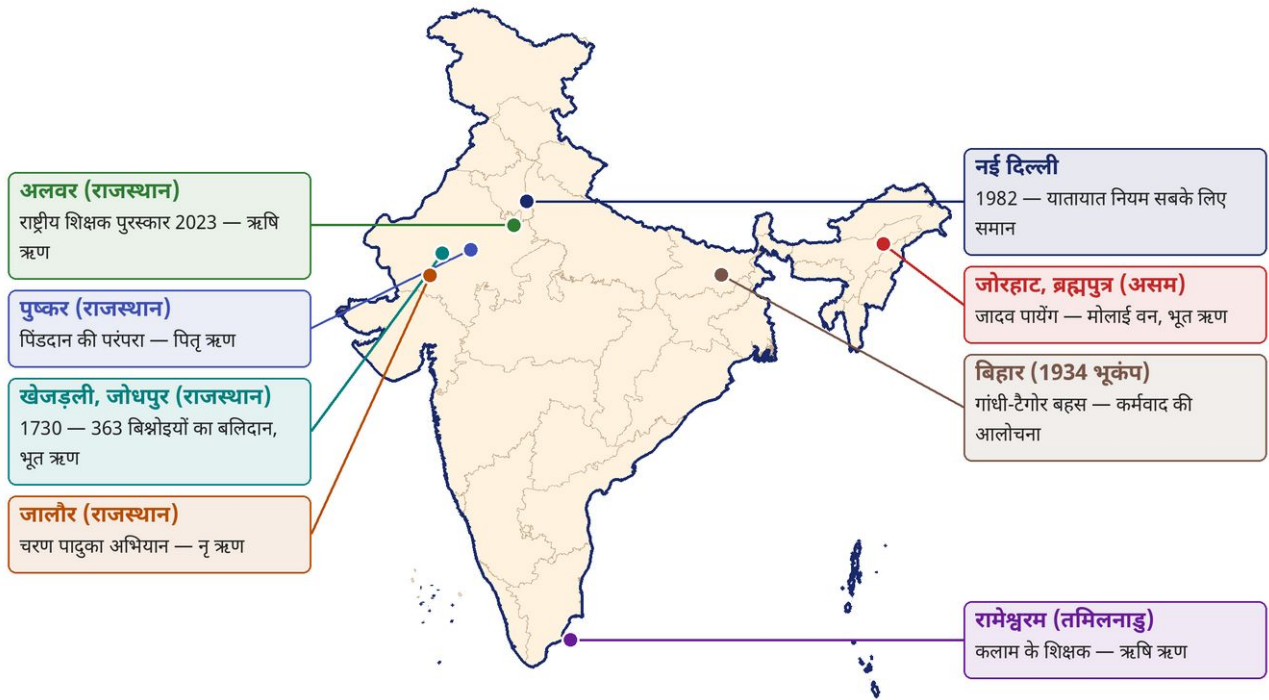
परियोजना से इलाक़े में बिजली, रोज़गार और राजस्व आता — यह भी देश की ज़रूरत थी। कंपनी के प्रतिनिधि ने कहा — "मैडम, रिकॉर्ड में यह बंजर है, आप बस रिपोर्ट भेज दीजिए।" गाँव वालों की भीड़ दूसरी ओर खड़ी थी — "यह हमारा ओरण है, हमारे पूर्वजों ने इसे बचाया है।"

कविता के सामने दुविधा थी — विकास (नृ ऋण, जन-कल्याण) बनाम प्रकृति और परंपरा (देव ऋण और भूत ऋण)। उन्होंने न तो आँख मूँदकर "बंजर" वाली रिपोर्ट भेजी, न ही परियोजना को सीधे खारिज किया। उन्होंने पटवारी के साथ भूमि का पुराना बंदोबस्त रिकॉर्ड निकलवाया, ग्राम सभा की बैठक बुलाई, ओरण की वास्तविक सीमा का ज़मीन पर सीमांकन करवाया, और पेड़ों, नाडी और पशु-चराई की तस्वीरों सहित पूरी रिपोर्ट ज़िला कलेक्टर को भेजी।

रिपोर्ट में उन्होंने सुझाव दिया कि ओरण की भूमि को परियोजना से अलग रखा जाए, और उसके बदले पास की वास्तव में बंजर भूमि का विकल्प दिया जाए। अंत में परियोजना पास की दूसरी भूमि पर लगी, ओरण बचा रहा, और गाँव के युवाओं को परियोजना में रोज़गार भी मिला। ग्राम सभा ने ओरण की रक्षा के लिए अपनी एक समिति भी बना ली।

🔑 **इस कहानी से सीख:** विकास और प्रकृति एक-दूसरे के शत्रु नहीं हैं। देव ऋण और भूत ऋण हमें याद दिलाते हैं कि प्रकृति केवल "ज़मीन का एक टुकड़ा" नहीं, बल्कि जीवन का आधार है। एक अच्छा प्रशासक कागज़ के रिकॉर्ड के साथ-साथ ज़मीन की सच्चाई देखता है, समुदाय को निर्णय में शामिल करता है, और ऐसा विकल्प खोजता है जिसमें विकास भी हो और प्रकृति का ऋण भी चुके।

इस अध्याय की सच्ची कहानियों का भारत-मानचित्र



मानचित्र केवल प्रतीकात्मक है — स्थान लगभग दर्शाए गए हैं

चित्र 2.7: इस अध्याय की सच्ची कहानियों का भारत-मानचित्र

आज के समय में ऋण की प्रासंगिकता: ऋण की अवधारणा प्रशासक में यह भाव जगाती है कि पद और संसाधन जनता की अमानत हैं, निजी संपत्ति नहीं। समकालीन समाज भी इससे बहुत लाभ उठा सकता है — कृतज्ञता, पर्यावरण-संरक्षण, बुजुर्गों का सम्मान और ज्ञान को आगे बढ़ाने जैसे मूल्य इसी विचार से पोषित होते हैं। ऊपर की कहानियाँ इसके जीवंत उदाहरण हैं।

4. कर्मवाद (Karmavada) — क्रिया और उसके परिणाम का नियम

आसान परिभाषा: कर्मवाद (Karmavada)

परिभाषा: कर्मवाद वह सिद्धांत है जिसके अनुसार हमारे कर्म (क्रियाएँ) — चाहे पहले किए गए हों या आज किए जा रहे हों, अच्छे हों या बुरे — अनिवार्य रूप से उनके अनुरूप परिणाम (फल) वर्तमान या भविष्य में लाते हैं। यह कारण-और-परिणाम (Cause and Effect) के सार्वभौमिक नियम पर आधारित है।

आसान भाषा में: सीधी भाषा में कहावत याद कीजिए — "जैसा बोओगे, वैसा काटोगे।" अगर आप गेहूँ बोएँगे तो गेहूँ ही उगेगा, बाजरा नहीं। ठीक वैसे ही, अच्छे कर्म अच्छा फल लाते हैं और बुरे कर्म बुरा — यह कोई सज़ा नहीं, बल्कि एक स्वाभाविक नियम है, जैसे आग में हाथ डालने पर जलना स्वाभाविक है। **उदाहरण:** एक ईमानदार अधिकारी जो नियम से काम करता है, धीरे-धीरे जनता का भरोसा (जनविश्वास) कमाता है — यह उसके अच्छे कर्म का फल है। वहीं भ्रष्टाचार से जाँच, दंड, प्रतिष्ठा-हानि और जनविश्वास के क्षरण का जोखिम हमेशा बना रहता है — यह उसके गलत कर्म का संभावित फल है। यही कर्मवाद है, चाहे कोई इसे "पिछले जन्म" से जोड़े या सिर्फ "इस जीवन के नतीजे" से।

4.1 कर्म के तीन प्रकार — संचित, प्रारब्ध और क्रियमाण

भारतीय दर्शन, विशेषकर वेदांत, कर्म को समय के आधार पर तीन भागों में बाँटता है। इसे समझने की सबसे प्रसिद्ध उपमा **धनुर्धारी (तीरंदाज़)** की है:

◆ **संचित कर्म (Sanchita):** पिछले सभी जन्मों और अब तक के जीवन में किए गए कर्मों का कुल जमा भंडार, जिसका फल अभी मिलना बाकी है। यह **तरकश में रखे बाणों** जैसा है — अभी चले नहीं, पर मौजूद हैं।

◆ **प्रारब्ध कर्म (Prarabdha):** संचित कर्मों का वह हिस्सा, जिसका फल इस जीवन में मिलना शुरू हो चुका है — जैसे जन्म की परिस्थितियाँ। यह **छूट चुके बाण** जैसा है, जिसे अब रोका नहीं जा सकता; उसे बस धैर्य से भोगना है।

◆ **क्रियमाण या आगामी कर्म (Kriyamana / Agami):** जो कर्म हम अभी, इस समय कर रहे हैं, और जिनका फल आगे मिलेगा। यह **हाथ में पकड़े बाण** जैसा है — इसे कहाँ चलाना है, यह पूरी तरह हमारे हाथ में है।

यह वर्गीकरण एक बहुत ज़रूरी बात सिखाता है — **बीते कर्म हमारे वर्तमान को प्रभावित करते हैं, पर हमारा भविष्य हमारे आज के कर्मों से बनता है।** इसलिए कर्मवाद व्यक्ति को निराश नहीं, बल्कि ज़िम्मेदार बनाता है।

कर्म के तीन प्रकार — धनुर्धारी की उपमा



चित्र 2.8: कर्म के तीन प्रकार — धनुर्धारी की उपमा

आसान परिभाषा: संचित, प्रारब्ध और क्रियमाण कर्म

परिभाषा: वेदांत में कर्म का त्रिविध वर्गीकरण — संचित (जमा भंडार), प्रारब्ध (जिसका फल शुरू हो चुका) और क्रियमाण/आगामी (वर्तमान कर्म, जिनका फल भविष्य में मिलेगा)।

आसान भाषा में: जो पहले कमाया वह जमा है, जो इस समय भुगत रहे हैं वह तय है, और जो आज कर रहे हैं वही कल बनेगा। 🏠

उदाहरण: किसी छात्र का पिछले साल का कमजोर आधार (प्रारब्ध) उसकी आज की कठिनाई है, पर आज की रोज़ की पढ़ाई (क्रियमाण) ही अगले साल का परिणाम तय करेगी।

4.2 कर्मवाद बनाम भाग्यवाद — एक आम भ्रम

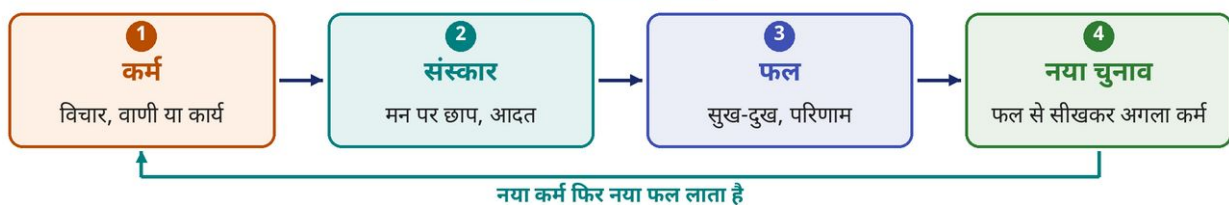
बहुत से लोग कर्मवाद को भाग्यवाद (Fatalism) समझ लेते हैं — "जो लिखा है वही होगा, कुछ करने से क्या फ़ायदा?" जबकि दोनों बिल्कुल उल्टे विचार हैं:

आधार	कर्मवाद	भाग्यवाद
मूल विचार	जैसा कर्म, वैसा फल — भविष्य कर्म से बनता है	सब पहले से तय है — मनुष्य कुछ नहीं बदल सकता
मनुष्य की भूमिका	सक्रिय कर्ता, अपने कर्मों के लिए ज़िम्मेदार	निष्क्रिय, परिस्थितियों का शिकार
प्रशासन पर असर	जवाबदेही, सुधार और परिश्रम को बढ़ावा	उदासीनता — "गरीबी तो उनकी किस्मत है"
समाज पर असर	परिवर्तन संभव	अन्याय को सही ठहराने का खतरा

4.3 कर्मवाद के चार मूल सिद्धांत

सिद्धांत	सरल व्याख्या
1. कारण-परिणाम नियम (विपाक — कर्म का फल के रूप में पकना)	हर क्रिया का कोई-न-कोई परिणाम अवश्य होता है — कुछ भी बिना नतीजे के नहीं जाता।
2. प्रतीत्यसमुत्पाद (कारण-परस्परता)	बौद्ध धर्म का व्यापक कारण-परस्परता सिद्धांत — हर घटना अनेक कारणों और परिस्थितियों पर निर्भर होकर उत्पन्न होती है; कर्म का नैतिक आधार व्यक्ति की चेतना/इरादा (Cetana) है।
3. नैतिक उत्तरदायित्व	हर व्यक्ति अपने चुनावों और कार्यों के लिए खुद ज़िम्मेदार है — किसी और पर दोष नहीं डाला जा सकता।
4. पुनर्जन्म का नियम (संसार)	पारंपरिक मान्यता के अनुसार, इस जन्म के कर्म अगले जन्म को भी प्रभावित करते हैं।

कर्म का चक्र



चित्र 2.9: कर्म का चक्र

4.4 जैन धर्म में कर्मवाद — मुक्ति के तीन रत्न

आसान भाषा में: जैन दर्शन में कर्म को समझाने के लिए एक सरलीकृत रूपक अक्सर दिया जाता है — जैसे धूल और बादल सूरज की रोशनी को ढक देते हैं, वैसे ही हमारे कर्म हमारी आत्मा की असली, शुद्ध और दिव्य प्रकृति को ढक लेते हैं (जैन दर्शन में वास्तव में कर्म को सूक्ष्म पुद्गल/कर्म-द्रव्य के रूप में भी समझाया गया है, जिसका विस्तार यहाँ आवश्यक नहीं)। मुक्ति (मोक्ष) पाने के लिए तीन रत्न ज़रूरी हैं — सम्यक्

दर्शन (सही नज़रिया), सम्यक् ज्ञान (सही समझ), सम्यक् चरित्र (सही आचरण)। बंधन में डालने वाले चार मुख्य दोष (कषाय) हैं — क्रोध, अहंकार, छल-कपट (माया) और लालच — इन्हें "चिपकने वाले पदार्थ" कहा गया है क्योंकि ये कर्म-कर्मों को आत्मा से चिपका देते हैं।

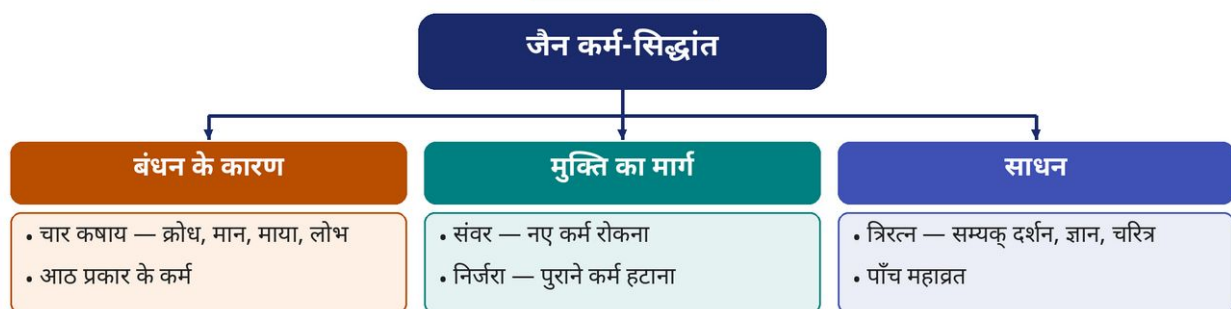
◆ **मुक्ति का रास्ता:** जैन दर्शन के अनुसार मुक्ति दो कदमों से मिलती है। पहला है संवर — यानी संयम और सजगता से नए कर्म-कर्मों को आत्मा की ओर आने से रोकना। दूसरा है निर्जरा — यानी तप और साधना से पहले से चिपके पुराने कर्म-कर्मों को झाड़ देना। जब नए कर्म आना बंद हो जाएँ और पुराने सब झाड़ जाएँ, तब आत्मा शुद्ध होकर मोक्ष पाती है।

◆ **पाँच महाव्रत:** जैन साधु-साधवियाँ पाँच बड़े व्रतों का पूरी कठोरता से पालन करते हैं — अहिंसा (किसी जीव को कष्ट न देना), सत्य, अस्तेय (चोरी न करना), ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह (ज़रूरत से ज़्यादा संग्रह न करना)। गृहस्थ लोग इन्हीं व्रतों का हल्का रूप "अणुव्रत" के रूप में अपनाते हैं।

जैन दर्शन में कर्म के **आठ प्रकार** बताए गए हैं, जिन्हें दो समूहों में बाँटा जाता है। **घाती कर्म** आत्मा के मूल गुणों (ज्ञान, दर्शन, सुख, शक्ति) को सीधे ढकते हैं, जबकि **अघाती कर्म** केवल शरीर और सांसारिक स्थिति से जुड़े होते हैं:

समूह	कर्म	क्या प्रभावित करता है
घाती (4)	ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय, अंतराय	ज्ञान, अनुभूति, सही दृष्टि और आत्म-शक्ति को ढकते हैं
अघाती (4)	वेदनीय, आयु, नाम, गोत्र	सुख-दुख का अनुभव, आयु, शरीर और सामाजिक स्थिति

जैन कर्मवाद — बंधन और मुक्ति



चित्र 2.10: जैन कर्मवाद — बंधन और मुक्ति

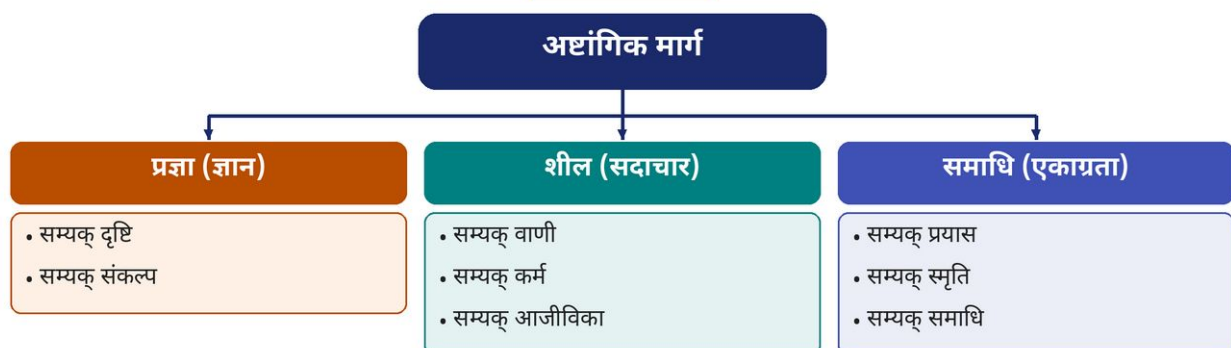
4.5 बौद्ध धर्म में कर्मवाद — अष्टांगिक मार्ग

बौद्ध धर्म के अनुसार, इस जीवन की निरंतरता से अगला जीवन जन्म लेता है — और यह प्रक्रिया कर्म के नियम से ही संचालित होती है। पुनर्जन्म का कारण है — आसक्ति (राग), द्वेष और मोह में डूबकर किए गए कर्म। इनसे मुक्ति का रास्ता है — अष्टांगिक मार्ग: सम्यक् दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक् वाणी, सम्यक् कर्म, सम्यक् आजीविका, सम्यक् प्रयास, सम्यक् स्मृति और सम्यक् समाधि।

बौद्ध धर्म में कर्म का सबसे महत्वपूर्ण तत्व **चेतना (इरादा)** है। बुद्ध ने कहा कि केवल बाहरी कार्य नहीं, बल्कि उसके पीछे की नीयत ही कर्म को अच्छा या बुरा बनाती है। अष्टांगिक मार्ग को तीन समूहों में बाँटा जाता है — **प्रज्ञा (ज्ञान)**, **शील (सदाचार)** और **समाधि (मन की एकाग्रता)**।

“ भिक्षुओ, मैं चेतना (इरादे) को ही कर्म कहता हूँ। (Intention, monks, I tell you, is kamma.) ” — गौतम बुद्ध (अंगुत्तर निकाय)

अष्टांगिक मार्ग — तीन समूहों में



चित्र 2.11: अष्टांगिक मार्ग — तीन समूहों में

4.6 कर्मवाद की आलोचना — क्या यह असमानता को सही ठहराता है?

☀ **कहानी — डॉ. भीमराव आंबेडकर की तीखी आलोचना**

डॉ. भीमराव आंबेडकर ने अपनी अधूरी कृति "प्राचीन भारत में क्रांति और प्रतिक्रांति" (Revolution and Counter-Revolution in

Ancient India, मरणोपरांत प्रकाशित) के "कृष्ण और उनकी गीता" (Krishna and His Gita) खंड में एक गंभीर सवाल उठाया — क्या भगवद्गीता का "कर्मयोग" सिद्धांत सच में एक सार्वभौमिक निष्काम-कर्म का उपदेश है, या यह बौद्ध धर्म की समानता-आधारित चुनौती के जवाब में वर्ण-व्यवस्था (चातुर्वर्ण्य) को बचाने के लिए गढ़ा गया एक दार्शनिक हथियार है? उनका तर्क था कि गीता में मोक्ष को व्यक्ति के "वर्ण-धर्म" (यानी जन्म से मिली जाति के तय कर्तव्य) से जोड़ दिया गया — जिसका मतलब यह हुआ कि निचली मानी गई जाति में जन्मा एक बेहद समर्पित व्यक्ति भी अपने "तय" काम को नकारकर मुक्ति नहीं पा सकता। आंबेडकर के अनुसार, इस तरह कर्मवाद को नैतिक कारण-परिणाम की जगह एक ऐसे औज़ार की तरह इस्तेमाल किया गया जो जातिगत ऊँच-नीच को "ब्रह्मांडीय रूप से तय" और इसलिए अपरिवर्तनीय दिखा दे — जिससे लोग इस असमानता के खिलाफ आवाज़ ही न उठाएँ।

◆ **भगवद्गीता का जवाब:** गीता खुद इस भाग्यवादी नज़रिए को नकारती है — यह निष्काम कर्म (फल की चिंता किए बिना कर्तव्य निभाना) और स्वतंत्र इच्छा ("यथेच्छसि तथा कुरु" — जैसा तुझे उचित लगे, वैसा कर) का समर्थन करती है, न कि भाग्यवाद का।

“ **तेरा अधिकार केवल कर्म करने में है, उसके फलों पर कभी नहीं; तू कर्मफल का कारण मत बन, और कर्म न करने में भी तेरी आसक्ति न हो।** (कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥) ” — भगवद्गीता (2.47)

☀ कहानी — जब गांधीजी और टैगोर एक प्राकृतिक आपदा पर आपस में भिड़ गए

15 जनवरी 1934 को बिहार-नेपाल में आए भीषण भूकंप में हज़ारों लोगों की जान गई। इसके बाद महात्मा गांधी ने अपनी पत्रिका "हरिजन" में लिखा कि यह भूकंप "हरिजनों (दलितों) के प्रति किए गए महापाप — यानी छुआछूत — का दैवीय दंड" है। रवींद्रनाथ टैगोर ने इस पर तीखी असहमति जताते हुए हरिजन पत्रिका में ही जवाब भेजा — उन्होंने कहा कि प्राकृतिक घटनाओं को नैतिक पाप से जोड़ना "अवैज्ञानिक सोच" है, क्योंकि प्रकृति की घटनाएँ भौतिक नियमों से होती हैं, और ऐसी व्याख्या पीड़ितों के प्रति भी अन्यायपूर्ण है। गांधीजी ने टैगोर की बात मानी कि उन्हें प्रकृति के नियमों की पूरी जानकारी नहीं, फिर भी अपनी बात पर अड़े रहे कि आपदाएँ किसी-न-किसी रूप में मनुष्य के नैतिक आचरण से जुड़ी होती हैं। यह बहस आज भी कर्मवाद की सीमाओं को समझने का एक बेहतरीन उदाहरण है — कर्मवाद को व्यक्तिगत नैतिकता तक तो ठीक माना जा सकता है, पर सामूहिक त्रासदियों को "पाप का फल" कहना खतरनाक भी हो सकता है।

कर्मवाद — आलोचना और बचाव

आलोचना	बनाम	बचाव / उत्तर
जन्म की स्थिति को "पिछले कर्म" बताकर जाति-भेद को सही ठहराना (आंबेडकर)	असमानता	गीता गुण और कर्म पर बल देती है, स्वतंत्र इच्छा ("यथेच्छसि तथा कुरु") का समर्थन करती है
प्राकृतिक आपदा को पाप का दंड बताना अवैज्ञानिक (टैगोर)	आपदा	कर्मवाद व्यक्ति के नैतिक उत्तरदायित्व का सिद्धांत है, प्रकृति का नहीं
भाग्यवाद को बढ़ावा, सुधार की इच्छा कम	निष्क्रियता	क्रियमाण कर्म — भविष्य हमारे हाथ में है
पुनर्जन्म का वैज्ञानिक प्रमाण नहीं	प्रमाण	इसका नैतिक संदेश — "जैसा करोगे, वैसा भरोगे" — इस जीवन में भी सत्य है

चित्र 2.12: कर्मवाद — आलोचना और बचाव

4.7 प्रशासन में कर्मवाद की प्रासंगिकता

कर्मवाद का सिद्धांत	प्रशासनिक महत्व
नैतिक उत्तरदायित्व	जवाबदेही, सत्यनिष्ठा, विवेकपूर्ण निर्णय — "कर्तव्य के लिए कर्तव्य।"
कारण-परिणाम	कोई भी कर्म बिना परिणाम के नहीं — नेता, अधिकारी, कॉर्पोरेट — सब जवाबदेह।
निष्काम कर्म	पुरस्कार की चाह या दंड के डर के बिना काम करना — सच्ची लोक-सेवा की भावना।
भ्रष्टाचार-विरोध	भ्रष्टाचार = विकर्म (गलत कर्म) — भ्रष्टाचार-विरोधी ढाँचे का नैतिक आधार।

आंबेडकर की आलोचना और गीता के निष्काम-कर्म वाला उत्तर — दोनों पक्षों को साथ रखकर देखने से ही कर्मवाद की संतुलित समझ बनती है। गांधी-टैगोर की बहस भी यही दिखाती है कि इस सिद्धांत को आँख मूँदकर नहीं, आलोचनात्मक दृष्टि से समझना ज़रूरी है।

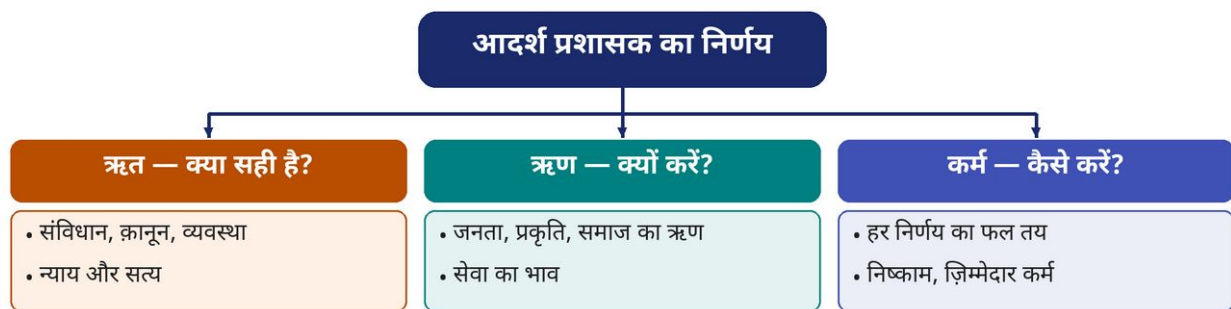
5. ऋत + ऋण + कर्मवाद — त्रिकोणीय संबंध

अब तक हमने ऋत, ऋण और कर्मवाद — तीनों को अलग-अलग समझा। पर असल में ये तीनों मिलकर एक ही पूरी नैतिक प्रणाली बनाते हैं, जैसे एक त्रिभुज की तीन भुजाएँ। इसे एक सरल सवाल-जवाब की तरह याद रखें:

अवधारणा	कौन-सा सवाल पूछती है?	प्रशासनिक सादृश्य
ऋत (Rit)	क्या सही है? (सार्वभौमिक व्यवस्था कैसी है)	संविधान = आधुनिक ऋत — सही और गलत की सीमा तय करता है।
ऋण (Rin)	क्यों करें? (कर्तव्य निभाने की वजह क्या है)	प्रशासक का कर्तव्य = ऋण — जनता, संस्था और प्रकृति के प्रति ज़िम्मेदारी।
कर्मवाद (Karma)	कैसे करें? (ऋण कैसे चुकाया जाए)	प्रशासक का हर निर्णय = कर्म — जिसका परिणाम तय है।

💡 आसान भाषा में: इसे एक कहानी की तरह समझिए — मान लीजिए एक कलेक्टर के सामने एक गरीब किसान की ज़मीन पर अवैध कब्जे का मामला आता है। ऋत उसे बताता है कि कानून और इंसाफ के हिसाब से सही क्या है (ज़मीन किसान की है)। ऋण उसे याद दिलाता है कि जनता की सेवा करना उसका कर्तव्य (ऋण) है, इसलिए वह इस मामले को टाल नहीं सकता। और कर्मवाद उसे यह एहसास कराता है कि उसका फैसला (कर्म) — चाहे न्यायपूर्ण हो या पक्षपाती — उसका परिणाम ज़रूर भुगतना पड़ेगा, चाहे जनविश्वास के रूप में हो या जाँच-कार्रवाई के रूप में। यही तीनों मिलकर एक आदर्श प्रशासन की नींव रखते हैं।

ऋत + ऋण + कर्म — आदर्श प्रशासन का त्रिकोण



चित्र 2.13: ऋत + ऋण + कर्म — आदर्श प्रशासन का त्रिकोण

यह त्रिकोण ऋत, ऋण और कर्मवाद के आपसी संबंध को सबसे सरल रूप में दिखाता है — ऋत बताता है कि **क्या सही है**, ऋण बताता है कि **क्यों करें**, और कर्म बताता है कि **कैसे करें**। ऊपर दिया कलेक्टर वाला उदाहरण इन तीनों को एक साथ जोड़ देता है।

6. कर्तव्य (Duty) की अवधारणा

🔍 आसान परिभाषा: कर्तव्य (Duty)

📖 परिभाषा: "Duty" शब्द अंग्रेज़ी के "due" से बना है, यानी जो "बकाया" है, जो करना ही चाहिए। ईसा पूर्व पहली सदी के रोमन राजनेता, वक्ता और दार्शनिक मार्कस टुलियस सिसरो ने अपनी किताब "ऑन ड्यूटीज़" (De Officiis) में कर्तव्यों के अलग-अलग स्रोतों पर चर्चा की — उन्होंने बताया कि हमारे कर्तव्य नैतिक भलाई से पैदा होते हैं, और जहाँ निजी फ़ायदा और नैतिकता आपस में टकराएँ, वहाँ नैतिकता को ही चुनना चाहिए। सरल शब्दों में — एक नैतिक प्राणी के नाते जो काम हमें करना ही चाहिए, वही कर्तव्य है।

💡 आसान भाषा में: जैसे स्कूल में एक मॉनिटर को क्लास का ध्यान रखने की ज़िम्मेदारी दी जाए — वह भले ही उसे मज़ा न आए, पर वह काम करना उसका "कर्तव्य" बन जाता है क्योंकि उसे वह पद (भूमिका) मिली है। ठीक वैसे ही, हर इंसान को परिवार, समाज और देश में जो भूमिका मिली है, उसके हिसाब से कुछ काम करना उसका कर्तव्य बन जाता है — चाहे मन हो या न हो। **🏠 उदाहरण:** एक सिविल सेवक को वेतन, पेंशन, सुविधाएँ मिलती हैं (यह उसका अधिकार है) — इसके बदले नागरिकों को ईमानदार और बेहतर सेवा देना उसका कर्तव्य है। अगर वह सिर्फ अधिकार लेता रहे और कर्तव्य न निभाए, तो यह सिक्के का सिर्फ एक पहलू दिखाने जैसा है।

“ जीवन का कोई भी पक्ष — सार्वजनिक हो या निजी, कार्यस्थल हो या घर — नैतिक कर्तव्य से मुक्त नहीं हो सकता। (No phase of life, whether public or private... can be without its moral duty.) ” — मार्कस टुलियस सिसरो (Marcus Tullius Cicero), "ऑन ड्यूटीज़" (De Officiis)

6.1 विभिन्न दार्शनिकों की नज़र में कर्तव्य

दर्शन / विचारक	कर्तव्य की परिभाषा
स्टोइक दर्शन (Stoicism)	सार्वभौमिक प्राकृतिक नियमों और अपनी तर्कसंगत प्रकृति का सम्मान करना।
सुकरात (Socrates)	ज्ञान प्राप्त करना ही सबसे बड़ा कर्तव्य है।
प्लेटो (Plato)	तर्क, भावना और शारीरिक इच्छाओं में सामंजस्य (न्याय) बनाए रखना।
अरस्तू (Aristotle)	स्वर्णिम मध्य-मार्ग (Golden Mean) का पालन करना ही कर्तव्य है।
इमैनुएल कांट (Kant)	कर्तव्य के लिए कर्तव्य — बिना शर्त आदेश (Categorical Imperative)।

दर्शन / विचारक	कर्तव्य की परिभाषा
डब्ल्यू.डी. रॉस (W.D. Ross)	7 प्रथम-दृष्टया कर्तव्य — निष्ठा, क्षतिपूर्ति, कृतज्ञता, न्याय, परोपकार, आत्म-विकास, अहानि।
एफ.एच. ब्रैडली (F.H. Bradley, ब्रिटिश दार्शनिक)	"मेरा पद और उसके कर्तव्य" — जो पद मिला है, उसी के अनुसार कर्तव्य निभाना।
भगवद्गीता	निष्काम कर्म — फल की चिंता किए बिना कर्तव्य-पालन।

6.2 इमैनुएल कांट (Immanuel Kant) — पूर्ण और अपूर्ण कर्तव्य

18वीं सदी के जर्मन दार्शनिक इमैनुएल कांट (1724-1804) के अनुसार नैतिक कार्य वही है जो **केवल कर्तव्य की भावना** से किया जाए — किसी लाभ, डर या भावना के कारण नहीं। उन्होंने कर्तव्यों को दो भागों में बाँटा:

◆ **पूर्ण कर्तव्य (Perfect Duty):** जिनका पालन हर स्थिति में बिना अपवाद करना ही है — जैसे झूठ न बोलना, वादा न तोड़ना, किसी की जान न लेना। इन्हें तोड़ने का कोई "उचित कारण" नहीं हो सकता।

◆ **अपूर्ण कर्तव्य (Imperfect Duty):** जिनका पालन ज़रूरी तो है, पर कब, कितना और कैसे — यह व्यक्ति के विवेक पर छोड़ा गया है — जैसे दूसरों की मदद करना (परोपकार) या अपनी प्रतिभा का विकास करना।

“ केवल उसी नियम के अनुसार कार्य करो, जिसे तुम एक साथ यह भी चाह सको कि वह एक सार्वभौमिक नियम बन जाए। (Act only according to that maxim whereby you can at the same time will that it should become a universal law.) ” — इमैनुएल कांट (Immanuel Kant)

6.3 डब्ल्यू.डी. रॉस (W.D. Ross) के सात प्रथम-दृष्टया कर्तव्य

ब्रिटिश दार्शनिक डब्ल्यू.डी. रॉस ने 1930 में अपनी पुस्तक "द राइट एंड द गुड" (The Right and the Good) में कहा कि हमारे कई कर्तव्य होते हैं, और हर कर्तव्य "पहली नज़र में" (Prima Facie) बाध्यकारी है। जब दो कर्तव्य आपस में टकराएँ, तो व्यक्ति को परिस्थिति देखकर अपने विवेक से तय करना पड़ता है कि उस समय कौन-सा कर्तव्य ज़्यादा भारी है — वही उसका **वास्तविक कर्तव्य (Actual Duty)** बन जाता है।

कर्तव्य	अर्थ	प्रशासनिक उदाहरण
1. निष्ठा (Fidelity)	वादा निभाना, सच बोलना	जनसुनवाई में दिए आश्वासन को समय पर पूरा करना
2. क्षतिपूर्ति (Reparation)	अपनी गलती से हुए नुकसान की भरपाई	विभाग की गलती से रुके भुगतान को ब्याज सहित देना
3. कृतज्ञता (Gratitude)	जिसने भला किया, उसका आभार मानना	आपदा में मदद करने वाले स्वयंसेवकों का सम्मान
4. न्याय (Justice)	लाभ और बोझ का उचित बँटवारा	राहत-सामग्री का पारदर्शी और समान वितरण
5. परोपकार (Beneficence)	दूसरों का भला करना	योजना से वंचित पात्र लोगों को ढूँढकर जोड़ना
6. आत्म-विकास (Self-improvement)	अपने ज्ञान और क्षमता को बढ़ाना	नई तकनीक और कानूनों का प्रशिक्षण लेना
7. अहानि (Non-maleficence)	किसी को नुकसान न पहुँचाना	अतिक्रमण हटाते समय मानवीय गरिमा का ध्यान

🔍 आसान परिभाषा: प्रथम-दृष्टया कर्तव्य (Prima Facie Duty)

📘 **परिभाषा:** ऐसा कर्तव्य जो सामान्य रूप से बाध्यकारी है, पर किसी अधिक महत्वपूर्ण कर्तव्य से टकराने पर उसके आगे झुक सकता है; टकराव में जो कर्तव्य भारी पड़ता है वही "वास्तविक कर्तव्य" बनता है।

💡 **आसान भाषा में:** हर कर्तव्य "पहली नज़र में" ज़रूरी है, पर दो कर्तव्य आपस में टकराएँ तो सोच-समझकर बड़े कर्तव्य को चुनना पड़ता है।

🏠 **उदाहरण:** आपने दोस्त से शाम को मिलने का वादा किया (निष्ठा), पर रास्ते में घायल व्यक्ति मिला — उसे अस्पताल पहुँचाना (अहानि, परोपकार) वादे से बड़ा कर्तव्य बन जाता है।

रॉस के सात प्रथम-दृष्टया कर्तव्य

प्रथम-दृष्टया कर्तव्य



चित्र 2.14: रॉस के सात प्रथम-दृष्टया कर्तव्य

6.4 जब कर्तव्य आपस में टकराएँ — क्या करें?

- ◆ **कर्तव्यों का क्रम देखें:** लोक सेवक के लिए सामान्य क्रम है — संविधान → क़ानून और नियम → संस्था के निर्देश → व्यक्तिगत और पारिवारिक कर्तव्य। यानी सबसे ऊपर संविधान है, उसके बाद संसद-विधानसभा के बनाए क़ानून और सेवा-नियम, फिर अपने विभाग या वरिष्ठ अधिकारी के निर्देश, और सबसे अंत में व्यक्तिगत व पारिवारिक कर्तव्य। इसलिए संविधान और क़ानून के खिलाफ़ जाने वाला कोई भी "आदेश" कर्तव्य नहीं बनता — चाहे वह किसी बड़े अधिकारी ने ही क्यों न दिया हो।
- ◆ **परिणाम और नुकसान तौलें:** यह सोचें कि किस कर्तव्य को छोड़ने से ज़्यादा और गंभीर नुकसान होगा — खासकर कमज़ोर लोगों को? जिस कर्तव्य को छोड़ने से नुकसान बढ़ा और अपूरणीय हो, उसे पहले निभाना चाहिए।
- ◆ **अंतरात्मा और पारदर्शिता:** जो निर्णय सबके सामने खुलकर उचित ठहराया जा सके, वही सामान्यतः सही होता है। एक आसान कसौटी यह है — अगर आपका निर्णय कल अख़बार में छप जाए और आप बिना झिझक उसका कारण बता सकें, तो वह आपकी अंतरात्मा की कसौटी पर भी खरा है।
- ◆ **स्वधर्म का विचार (गीता):** अपनी भूमिका से जुड़ा कर्तव्य पहले — जैसे युद्ध के मैदान में अर्जुन का क्षत्रिय-धर्म, और आज के लोक सेवक के लिए जन-सेवा का धर्म।

6.5 कर्तव्यों का श्रेणीक्रम — व्यक्ति से लेकर संविधान तक

कर्तव्य सिर्फ़ एक स्तर पर नहीं, बल्कि छह अलग-अलग स्तरों पर हमारे जीवन में मौजूद रहते हैं:

स्तर	उदाहरण	न निभाने पर नुकसान
व्यक्तिगत	करुणा, विनम्रता, उदारता दिखाना।	एकाकीपन, अवसाद, स्वैच्छित जीवन।
परिवार	बच्चों का माता-पिता के प्रति, पति-पत्नी का एक-दूसरे के प्रति कर्तव्य।	टूटते परिवार, तलाक, बुजुर्गों की उपेक्षा।
संगठन	अनुशासन, कौशल-विकास, सत्यनिष्ठा से काम करना।	भ्रष्टाचार, अकुशलता, घोटाले।
समाज	स्वच्छता, सहिष्णुता, सामाजिक कर्तव्य निभाना।	सांप्रदायिक तनाव, अव्यवस्था।
राज्य	क़ानून का पालन, कर चुकाना, मतदान करना।	जुर्मना, जेल, सेवा से निलंबन।
संविधान	अनुच्छेद 51A — मूलतः 10 मूल कर्तव्य 42वें संशोधन (1976) से जोड़े गए; 11वाँ कर्तव्य 86वें संशोधन अधिनियम, 2002 से जोड़ा गया।	मूल अधिकारों का हनन, संवैधानिक संकट।

कर्तव्यों का श्रेणीक्रम — व्यक्ति से संविधान तक



चित्र 2.15: कर्तव्यों का श्रेणीक्रम — व्यक्ति से संविधान तक

6.6 अनुच्छेद 51A — नागरिकों के 11 मूल कर्तव्य

मूल संविधान में नागरिकों के कर्तव्य नहीं थे। **स्वर्ण सिंह समिति** की सिफारिश पर **42वें संविधान संशोधन (1976)** द्वारा भाग 4-क (Part IV-A) में अनुच्छेद 51A जोड़कर 10 मूल कर्तव्य शामिल किए गए। बाद में **86वें संविधान संशोधन (2002)** ने 11वाँ कर्तव्य जोड़ा। ये कर्तव्य सीधे अदालत द्वारा लागू नहीं कराए जा सकते, पर कानूनों की व्याख्या और नागरिक-चेतना में इनका बड़ा महत्व है।

क्रम	मूल कर्तव्य (सरल भाषा में)
(क)	संविधान का पालन करना; उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्रीय ध्वज और राष्ट्रगान का सम्मान करना
(ख)	स्वतंत्रता संग्राम के महान आदर्शों को हृदय में संजोना और उनका पालन करना
(ग)	भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करना
(घ)	देश की रक्षा करना और बुलाए जाने पर राष्ट्र की सेवा करना
(ङ)	सभी लोगों में भाईचारा बढ़ाना; महिलाओं के सम्मान के विरुद्ध प्रथाओं का त्याग करना
(च)	हमारी मिली-जुली संस्कृति की समृद्ध विरासत का सम्मान और संरक्षण करना
(छ)	वन, झील, नदी, वन्यजीव सहित प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा करना; प्राणियों के प्रति दया रखना
(ज)	वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद तथा जिज्ञासा और सुधार की भावना का विकास करना
(झ)	सार्वजनिक संपत्ति की रक्षा करना और हिंसा से दूर रहना
(ञ)	व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के हर क्षेत्र में उत्कृष्टता की ओर बढ़ना
(ट)	माता-पिता या संरक्षक द्वारा 6 से 14 वर्ष के बच्चे को शिक्षा के अवसर देना (86वाँ संशोधन, 2002)

 **ऋण और मूल कर्तव्य:** मूल कर्तव्य पाँच ऋणों से सुंदर ढंग से मेल खाते हैं — पर्यावरण और प्राणियों के प्रति दया (भूत ऋण, देव ऋण), मिली-जुली संस्कृति का संरक्षण (पितृ ऋण), वैज्ञानिक दृष्टिकोण और बच्चों की शिक्षा (ऋषि ऋण), तथा भाईचारा और राष्ट्र-सेवा (नृ ऋण)।

6.7 कर्तव्य और अधिकार — एक ही सिक्के के दो पहलू

जहाँ एक व्यक्ति को कोई अधिकार मिलता है, वहीं दूसरे पक्ष का एक कर्तव्य अपने-आप जन्म ले लेता है — एक का अधिकार, हमेशा दूसरे का कर्तव्य होता है।

संदर्भ	अधिकार (Right)	कर्तव्य (Duty)
अनुच्छेद 14 — समानता	नागरिक का समान व्यवहार पाने का अधिकार।	राज्य का कर्तव्य — भेदभाव न करे, समान अवसर दे।
अनुच्छेद 21 — स्वच्छ पर्यावरण	नागरिक का स्वच्छ पर्यावरण पाने का अधिकार।	अनुच्छेद 51A(g) — नागरिक का पर्यावरण-संरक्षण का कर्तव्य।
सिविल सेवा	अधिकारी का वेतन-पेंशन पाने का अधिकार।	नागरिकों को बेहतर सेवा देने का कर्तव्य।

गांधीजी का कर्तव्य-सिद्धांत

महात्मा गांधी कहते थे — "अधिकारों के बजाय कर्तव्यों का घोषणापत्र बनाओ, अधिकार खुद-ब-खुद उसका पीछा करेंगे, जैसे शीत ऋतु के बाद वसंत अपने आप आता है।" यानी अगर हर कोई अपने कर्तव्यों पर ध्यान दे, तो दूसरों के अधिकार बड़ी हद तक अपने आप सुरक्षित हो जाते हैं — कानून की ज़रूरत घट सकती है, भले पूरी तरह समाप्त न हो।

कर्तव्य सबसे ऊपर — नीरजा भनोट (1986)

5 सितंबर 1986 को मुंबई से न्यूयॉर्क जा रहे पैन एम (Pan Am) विमान संख्या 73 को कराची हवाई अड्डे पर चार आतंकवादियों ने अपहृत कर लिया। विमान में 360 यात्री और 19 चालक-दल सदस्य थे। 22 वर्षीय वरिष्ठ परिचारिका **नीरजा भनोट** ने अपहरणकर्ताओं के चढ़ते ही कॉकपिट को सूचना दे दी, जिससे पायलट कॉकपिट की छत में बने आपातकालीन रास्ते से निकल गए और विमान वहीं रुक गया — पायलट न होने के कारण आतंकवादी विमान को उड़ाकर कहीं और नहीं ले जा सके।

लगभग 17 घंटे तक नीरजा ने यात्रियों को संभाला और अमेरिकी यात्रियों के पासपोर्ट छिपा दिए, ताकि उन्हें निशाना न बनाया जा सके। जब अंधेरे में गोलीबारी शुरू हुई, तो उन्होंने आपातकालीन द्वार खोलकर यात्रियों को बाहर निकाला। वे चाहतीं तो सबसे पहले खुद निकल सकती थीं, पर तीन बच्चों को गोलियों से बचाते हुए वे स्वयं शहीद हो गईं। उन्हें मरणोपरांत **अशोक चक्र** (1987) मिला — इसे पाने वाली वे पहली महिला थीं। उनका जीवन बताता है कि कर्तव्य का अर्थ है — अपनी भूमिका को अपने प्राणों से भी ऊपर रखना।

कर्तव्य और अधिकार एक ही सिक्के के दो पहलू हैं — ऊपर की तालिका के तीनों संवैधानिक उदाहरण और गांधीजी का कथन, दोनों यही सिद्ध करते हैं।

7. शुभ (Good) की अवधारणा

आसान परिभाषा: शुभ (Good)

परिभाषा: "Good" शब्द प्राचीन जर्मनिक मूल का है (जर्मन "GUT" इसी का सजातीय शब्द है), जिसका अर्थ है — किसी लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक। नीतिशास्त्र में "शुभ" का अर्थ है — नैतिक गुणों की अभिव्यक्ति, यानी वह सब कुछ जो हमारे उद्देश्य को पूरा करने में मदद करे। ब्रिटिश दार्शनिक जी.ई. मूर (G.E. Moore), जिन्होंने 1903 में "प्रिंसिपिया एथिका" पुस्तक लिखी, के अनुसार शुभ को शब्दों में पूरी तरह परिभाषित करना असंभव है — इसे सिर्फ महसूस किया जा सकता है, जैसे "पीला रंग" क्या है यह बताना मुश्किल है, बस देखकर पहचाना जा सकता है।

आसान भाषा में: सोचिए — अच्छा खाना खाना "शुभ" इसलिए है क्योंकि यह अच्छी सेहत पाने में मदद करता है, और अच्छी सेहत इसलिए "शुभ" है क्योंकि यह खुश और लंबी ज़िंदगी जीने में मदद करती है। यानी कुछ चीज़ें किसी और बड़े लक्ष्य तक पहुँचने का ज़रिया (साधन) होती हैं, जबकि कुछ चीज़ें खुद ही अंतिम लक्ष्य (साध्य) होती हैं। **उदाहरण:** एक छात्र के लिए परीक्षा में अच्छे अंक लाना "सापेक्ष शुभ" है (क्योंकि यह नौकरी पाने का साधन है), जबकि नौकरी में समाज-सेवा करके संतोष और खुशी पाना "निरपेक्ष शुभ" है (क्योंकि यह अपने आप में अंतिम लक्ष्य है, किसी और चीज़ का साधन नहीं)।

7.1 शुभ के दो प्रकार

सापेक्ष शुभ (Instrumental Good)	निरपेक्ष / सर्वोच्च शुभ (Intrinsic Good)
◆ किसी बड़े/उच्चतर शुभ को पाने का साधन-मात्र है।	◆ स्वयं ही अंतिम लक्ष्य (साध्य) है, किसी और का साधन नहीं।
◆ खुद के लिए नहीं, बल्कि किसी और लक्ष्य के लिए वांछित।	◆ मानव जीवन का परम उद्देश्य माना जाता है।
◆ उदाहरण: अच्छा पोषण (स्वास्थ्य पाने का साधन)।	◆ उदाहरण: मोक्ष, निर्वाण, सच्ची खुशी।
◆ हिंदू धर्म में: धर्म, अर्थ, काम — ये मोक्ष के साधन हैं।	◆ कांट के अनुसार: शुभ-संकल्प (Goodwill) वह नैतिक इच्छा है जो निजी लाभ या परिणाम के बजाय कर्तव्य के प्रति सम्मान से प्रेरित होकर कार्य करे।

सापेक्ष शुभ बनाम निरपेक्ष शुभ

सापेक्ष शुभ (साधन)	बनाम	निरपेक्ष शुभ (साध्य)
किसी बड़े लक्ष्य तक पहुँचने का साधन	अर्थ	अपने आप में अंतिम लक्ष्य
धन, पोषण, नियम-क़ानून	उदाहरण	मोक्ष, निर्वाण, सच्चा सुख, जन-कल्याण
अच्छी नीतियाँ, प्रक्रियाएँ	प्रशासन में	नागरिकों की खुशहाली और गरिमा

New India Education by Omkar Sir चित्र 2.16: सापेक्ष शुभ बनाम निरपेक्ष शुभ

7.2 चार पुरुषार्थ — शुभों की भारतीय सीढ़ी

भारतीय परंपरा जीवन के चार लक्ष्य या पुरुषार्थ बताती है — धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। ये चारों मिलकर "शुभ" की एक सीढ़ी बनाते हैं। अर्थ (धन) और काम (इच्छाओं की पूर्ति) बुरे नहीं हैं, पर ये धर्म (नैतिकता) की सीमा में रहें, तभी शुभ हैं। मोक्ष सबसे ऊँचा, निरपेक्ष शुभ है।

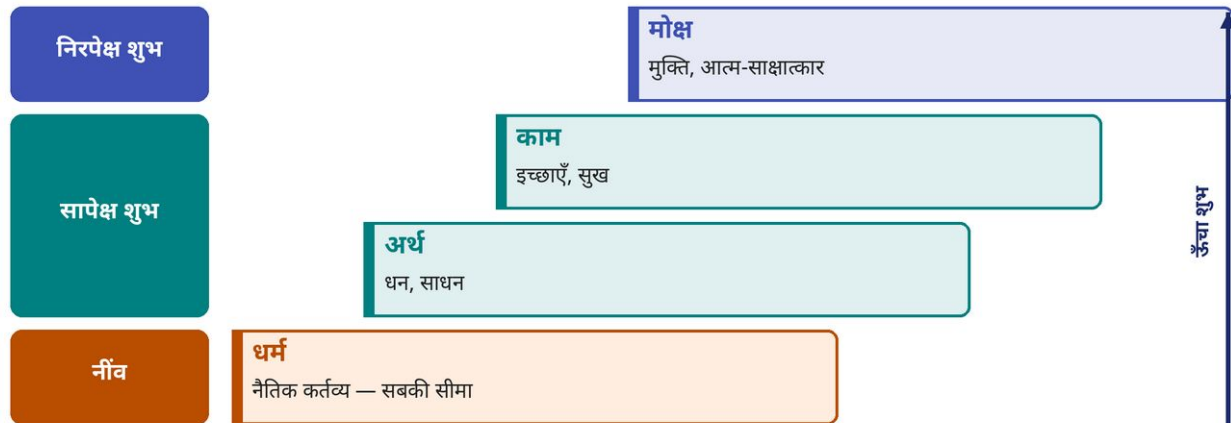
पुरुषार्थ	अर्थ	शुभ का प्रकार	प्रशासनिक संदेश
धर्म	नैतिक कर्तव्य, सदाचार	नींव — बाक़ी सबको दिशा देता है	हर निर्णय नैतिक सीमा में
अर्थ	धन, साधन, आजीविका	सापेक्ष शुभ	आर्थिक विकास — पर ईमानदारी से
काम	इच्छाएँ, सुख, सौंदर्य	सापेक्ष शुभ	नागरिकों के जीवन की गुणवत्ता
मोक्ष	मुक्ति, आत्म-साक्षात्कार	निरपेक्ष शुभ	निःस्वार्थ सेवा, आसक्ति-रहित कर्म

आसान परिभाषा: पुरुषार्थ (Purushartha)

परिभाषा: भारतीय दर्शन के अनुसार मानव जीवन के चार उचित लक्ष्य — धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष — जिनमें धर्म बाक़ी लक्ष्यों को नैतिक सीमा में बाँधता है।

आसान भाषा में: जीवन में पैसा कमाना और इच्छाएँ पूरी करना भी ज़रूरी है, बस ये सब ईमानदारी (धर्म) के रास्ते से हों, और अंतिम लक्ष्य आत्मिक शांति (मोक्ष) हो। **उदाहरण:** एक दुकानदार अच्छा मुनाफ़ा कमाए (अर्थ), परिवार के साथ सुखी रहे (काम), पर मिलावट न करे

चार पुरुषार्थ — शुभ की सीढ़ी



चित्र 2.17: चार पुरुषार्थ — शुभ की सीढ़ी

7.3 सुखवाद बनाम यूडेमोनिया — सुख के दो अर्थ

आधार	सुखवादी सुख (Hedonic)	यूडेमोनिया (Eudaimonia)
समर्थक	जेरेमी बेन्थम (Jeremy Bentham) — सुख ही शुभ है	अरस्तू (Aristotle) — सद्गुणपूर्ण जीवन ही शुभ है
अर्थ	अधिकतम सुख, न्यूनतम दुख	मानवीय क्षमताओं का पूर्ण विकास, सार्थक जीवन
प्रकृति	तात्कालिक, गिने-मापे जा सकने वाला	दीर्घकालिक, चरित्र से जुड़ा
उदाहरण	छुट्टी पर घूमना, स्वादिष्ट भोजन	किसी गाँव में स्कूल बनवाकर मिलने वाला संतोष

आसान परिभाषा: सर्वोच्च शुभ (Summum Bonum)

परिभाषा: वह अंतिम और सबसे ऊँचा शुभ, जिसे किसी और लक्ष्य के साधन के रूप में नहीं, बल्कि अपने आप में चाहा जाता है; अलग-अलग दर्शनों में यह मोक्ष, निर्वाण, यूडेमोनिया या शुभ-संकल्प है।

आसान भाषा में: वह "आखिरी मंज़िल" जिसके लिए हम बाक़ी सब करते हैं — जिसके बाद "किसलिए?" पूछने की ज़रूरत नहीं रहती।

उदाहरण: पढ़ाई नौकरी के लिए, नौकरी पैसे के लिए, पैसा परिवार के सुख के लिए — पर "सुख किसलिए?" का कोई उत्तर नहीं; सुख ही यहाँ अंतिम लक्ष्य है।

7.4 शुभ (Good) बनाम उचित (Right)

नीतिशास्त्र में "शुभ" और "उचित" दो अलग प्रश्नों के उत्तर हैं। शुभ बताता है कि कौन-सा लक्ष्य पाने योग्य है (जैसे जन-कल्याण), जबकि उचित बताता है कि कौन-सा कार्य सही है (जैसे नियमों का पालन, किसी के अधिकार का सम्मान)। परिणामवादी विचारक (जैसे बेन्थम और मिल, जो किसी कार्य को उसके परिणाम से परखते हैं) पहले "शुभ" तय करते हैं और फिर कहते हैं कि जो कार्य उस शुभ को बढ़ाए वही उचित है; जबकि कर्तव्यवादी विचारक, जैसे कांट, कहते हैं कि कुछ कार्य परिणाम चाहे जो हो, अपने आप में उचित या अनुचित होते हैं। एक अच्छे प्रशासक के लिए दोनों ज़रूरी हैं — अच्छा लक्ष्य भी और सही साधन भी।

7.5 विभिन्न दर्शनों में "सर्वोच्च शुभ"

दर्शन / विचारक	सर्वोच्च शुभ (Absolute Good)
हिंदू धर्म	मोक्ष — चार पुरुषार्थों की अंतिम मंज़िल।
बौद्ध धर्म	निर्वाण — अष्टांगिक मार्ग से दुःख से मुक्ति।
जैन धर्म	मोक्ष + आत्मा की शुद्धि — तीन रत्नों से प्राप्त।
अरस्तू (Aristotle)	यूडेमोनिया (Eudaimonia) — मानवीय उत्कर्ष/फलना-फूलना; चिंतनशील (Contemplative) जीवन को इसका उच्चतम रूप माना।
इमैनुएल कांट (Kant)	गुडविल (शुभ-संकल्प) — एकमात्र चीज़ जो बिना किसी शर्त के अच्छी है।
भगवद्गीता	मोक्ष/आत्म-साक्षात्कार परम लक्ष्य है; निष्काम कर्म (फल की इच्छा किए बिना कर्तव्य-पालन) उस तक पहुँचने का एक प्रमुख साधन/मार्ग है।

दर्शन / विचारक	सर्वोच्च शुभ (Absolute Good)
जेरेमी बेन्थम (Bentham)	अधिकतम लोगों का अधिकतम सुख (Utilitarian Good)।

विभिन्न दर्शनों में सर्वोच्च शुभ



चित्र 2.18: विभिन्न दर्शनों में सर्वोच्च शुभ

अशुभ (Evil): अशुभ वह है जो हमारे लक्ष्य की प्राप्ति में बाधक बने — जैसे लोभ, मोह, घृणा, भ्रष्टाचार और हिंसा। यह शुभ का ठीक उल्टा है।

शुभ और अच्छा प्रशासन: प्रशासन में अच्छे नियम-कानून सापेक्ष शुभ हैं, क्योंकि वे अपने आप में लक्ष्य नहीं, बल्कि लक्ष्य तक पहुँचने का साधन हैं; जबकि नागरिकों का कल्याण निरपेक्ष शुभ है, क्योंकि वही प्रशासन का अंतिम लक्ष्य (साध्य) है। अच्छा प्रशासन तभी बनता है जब साधन (नियम) और साध्य (जन-कल्याण), दोनों साफ़-सुथरे हों। कांट का "शुभ-संकल्प" (Goodwill) इसमें नीयत की शुद्धता जोड़ता है।

8. सद्गुण (Virtue) की अवधारणा

आसान परिभाषा: सद्गुण (Virtue)

परिभाषा: "Virtue" शब्द लैटिन के "Virtus" से आया है, जो "Vir" (पुरुष) से बना है और जिसका अर्थ है वीरता/पुरुषोचित उत्कृष्टता। संस्कृत में इसके समकक्ष शब्द "वीर्य" का अर्थ है — वीरता, शक्ति, उत्कृष्टता। सद्गुण का मतलब है — आंतरिक चरित्र की उत्कृष्टता, जो लंबे समय तक अच्छी आदतों का अभ्यास करने से अर्जित होती है।

आसान भाषा में: जैसे एक खिलाड़ी रोज़ अभ्यास करके एक कुशल खिलाड़ी बनता है, वैसे ही रोज़-रोज़ ईमानदारी, साहस और संयम जैसे अच्छे व्यवहार को दोहराने से इंसान के अंदर वह "आदत" पक्की हो जाती है — यही सद्गुण है। इसमें तीन बातें ज़रूरी हैं — यह जानना कि कर्तव्य क्या है, उसे अपनी मर्जी से निभाना, और बार-बार अभ्यास से उसे अपने चरित्र का स्थायी हिस्सा बना लेना। **उदाहरण:** एक अधिकारी जो सालों-साल ईमानदारी से काम करते हुए कभी भी रिश्त के प्रलोभन में नहीं आता — उसके लिए ईमानदार रहना अब कोई मुश्किल फैसला नहीं, बल्कि उसके चरित्र का स्वाभाविक हिस्सा (सद्गुण) बन चुका होता है।

New India Education by Omkar Sir

8.1 विभिन्न दार्शनिकों के अनुसार सद्गुण

दार्शनिक	सद्गुण की परिभाषा	प्रमुख सद्गुण
सुकरात (Socrates)	ज्ञान ही सद्गुण है — अज्ञान ही एकमात्र दुर्गुण है।	ज्ञान, सत्य की खोज।
प्लेटो (Plato)	नैतिक आचरण के चार मूल सद्गुण, इनमें न्याय सबसे महत्वपूर्ण।	विवेक, साहस, संयम, न्याय (Wisdom, Courage, Temperance, Justice — संक्षेप में WCTJ)।
अरस्तू (Aristotle)	सद्गुण अनेक हैं, और हर नैतिक सद्गुण दो अतियों के बीच का स्वर्णिम मध्य (Golden Mean) होता है।	साहस (भय और दुस्साहस के बीच का संतुलन)।
भगवद्गीता	स्थितप्रज्ञ (सुख-दुख में स्थिर बुद्धि वाला), निष्काम कर्म — ये आंतरिक उत्कृष्टता के रूप हैं।	निष्काम कर्म, स्थितप्रज्ञता।
इमैन्युएल कांट (Kant)	आंतरिक-बाहरी बाधाओं के बावजूद कर्तव्य पूरा करने की इच्छाशक्ति।	शुभ-संकल्प, कर्तव्यनिष्ठा।

8.2 अरस्तू — बौद्धिक और नैतिक सद्गुण

अरस्तू ने सद्गुणों को दो प्रकारों में बाँटा। **बौद्धिक सद्गुण (Intellectual Virtues)** — जैसे विवेक, व्यावहारिक बुद्धि और ज्ञान — शिक्षा और अनुभव से विकसित होते हैं। **नैतिक सद्गुण (Moral Virtues)** — जैसे साहस, संयम, उदारता और न्यायप्रियता — **आदत और अभ्यास** से बनते हैं। अरस्तू कहते हैं कि कोई भी व्यक्ति केवल किताब पढ़कर साहसी नहीं बनता; साहसी कार्य बार-बार करके ही साहसी बनता है।

8.3 स्वर्णिम मध्य (Golden Mean) — दो अतियों के बीच

अरस्तू के अनुसार हर नैतिक सद्गुण दो दोषों के बीच का संतुलन-बिंदु है — एक दोष "कमी" का और दूसरा "अति" का। यह मध्य बिंदु गणित का बीच नहीं है, बल्कि परिस्थिति के अनुसार **विवेक से तय किया गया उचित बिंदु** है।

क्षेत्र	कमी का दोष	सद्गुण (मध्य)	अति का दोष
भय का सामना	कायरता	साहस	दुस्साहस (लापरवाह जोखिम)
सुख-भोग	संवेदनहीनता	संयम	भोग-विलास
धन देना	कंजूसी	उदारता	फिजूलखर्ची
क्रोध	निर्जीवता (अन्याय पर भी चुप)	धैर्य / शांत स्वभाव	चिड़चिड़ापन
अपने बारे में सच	झूठी विनम्रता	सत्यवादिता	डींग मारना
सम्मान	हीनता-भाव	आत्म-सम्मान (उदात्तता)	घमंड
सामाजिक व्यवहार	झगड़ालूपन	मैत्री-भाव	चापलूसी

आसान परिभाषा: स्वर्णिम मध्य (Golden Mean)

परिभाषा: अरस्तू का सिद्धांत कि प्रत्येक नैतिक सद्गुण "कमी" और "अति" — इन दो दोषों के बीच का वह उचित बिंदु है, जिसे व्यक्ति परिस्थिति के अनुसार विवेक से तय करता है।

आसान भाषा में: न बहुत कम, न बहुत ज़्यादा — सही मात्रा, सही समय, सही व्यक्ति के साथ, सही कारण से। **उदाहरण:** खाना कम खाएँ तो कमज़ोरी, ज़्यादा खाएँ तो बीमारी — भूख के अनुसार सही मात्रा ही स्वास्थ्य है; सद्गुण भी ऐसा ही है।

स्वर्णिम मध्य — हर सद्गुण दो दोषों के बीच

कमी का दोष	मध्य	अति का दोष
कायरता	साहस	दुस्साहस
संवेदनहीनता	संयम	भोग-विलास
कंजूसी	उदारता	फिजूलखर्ची
निर्जीवता	धैर्य	चिड़चिड़ापन
झूठी विनम्रता	सत्यवादिता	डींग मारना
झगड़ालूपन	मैत्री-भाव	चापलूसी

चित्र 2.19: स्वर्णिम मध्य — हर सद्गुण दो दोषों के बीच

“ सद्गुण चरित्र की वह अवस्था है जो चुनाव से जुड़ी है और एक मध्य में स्थित होती है। (Virtue, then, is a state of character concerned with choice, lying in a mean.) ” — अरस्तू (Aristotle), निकोमेकियन एथिक्स

8.4 भारतीय परंपरा में सद्गुण — पारमिताएँ और दैवी संपदा

भारतीय परंपरा में भी सद्गुणों की लंबी सूचियाँ मिलती हैं। बौद्ध धर्म की थेरवाद परंपरा में **दस पारमिताएँ** (पूर्णताएँ) बताई गई हैं — दान, शील (सदाचार), नैष्कर्म्य (त्याग), प्रज्ञा (ज्ञान), वीर्य (पराक्रम), क्षांति (धैर्य-क्षमा), सत्य, अधिष्ठान (दृढ़ संकल्प), मैत्री और उपेक्षा (समभाव)। भगवद्गीता के सोलहवें अध्याय में **दैवी संपदा** के रूप में अभय, अहिंसा, सत्य, दया, क्षमा जैसे गुण गिनाए गए हैं (इसकी विस्तृत चर्चा अध्याय 04 में है)। जैन धर्म के पाँच महाव्रत भी सद्गुणों का ही अभ्यास हैं।

दस पारमिताएँ — बौद्ध सद्गुण

दान	शील	नैष्कर्म्य	प्रज्ञा	वीर्य
क्षांति	सत्य	अधिष्ठान	मैत्री	उपेक्षा

चित्र 2.20: दस पारमिताएँ — बौद्ध सद्गुण

8.5 सद्गुण के प्रकार — असली उदाहरणों के साथ

- ◆ **स्वयं के प्रति सद्गुण** — वे गुण जो व्यक्ति अपने भीतर विकसित करता है, जैसे विवेक (सही-गलत की परख), साहस, संयम और आत्म-अनुशासन। ये उसे भीतर से मज़बूत बनाते हैं।
- ◆ **दूसरों के प्रति सद्गुण** — वे गुण जो दूसरों के साथ हमारे व्यवहार में दिखते हैं, जैसे क्षमा, दया, करुणा और उदारता। एक प्रशासक के लिए ये गुण जनता के प्रति संवेदनशीलता के रूप में दिखते हैं।
- ◆ **आदर्श के रूप में सद्गुण** — वे ऊँचे मूल्य जिन्हें पूरा समाज आदर्श मानता है, जैसे न्याय, सत्य और सद्भावना। ये किसी एक व्यक्ति तक सीमित नहीं, बल्कि सबके साथ समान व्यवहार की माँग करते हैं।

🌟 कहानी — किरण बेदी और 'क्रेन बेदी' की पहचान

1982 में दिल्ली यातायात पुलिस की डीसीपी रहीं **किरण बेदी** के कार्यकाल में एक चर्चित घटना हुई, जब प्रधानमंत्री कार्यालय से संबद्ध एक गलत पार्क कार पर भी नियमानुसार कार्रवाई (टोइंग) की गई। यह कार्रवाई सीधे किरण बेदी द्वारा स्वयं किए जाने का दावा विवादित है — वास्तव में यह उनके अधीनस्थ यातायात अधिकारी द्वारा की गई कार्रवाई थी, जिसे किरण बेदी ने पूरा समर्थन दिया और इसके पीछे खड़ी रहीं। इसी घटना ने उन्हें "क्रेन बेदी" के रूप में लोकप्रिय पहचान दिलाई। यह घटना सद्गुण के तीसरे प्रकार — "आदर्श के रूप में सद्गुण" यानी नियम के सामने सबकी बराबरी — का एक उपयुक्त उदाहरण है, क्योंकि किरण बेदी के पूरे करियर में संस्थागत निष्पक्षता को समर्थन देने की यह प्रवृत्ति बार-बार दिखी — यही सद्गुण की असली पहचान है, एक बार का अच्छा काम नहीं, बल्कि जीवन-भर दोहराई गई अच्छी आदत।

💡 **याद रखें:** एक सद्गुणी अधिकारी नियम तोड़ने की कोशिश ही नहीं करता, क्योंकि उसका चरित्र ही उसकी सबसे बड़ा सुरक्षा-कवच होता है। अरस्तू ने कहा था — "एक सच में अच्छा इंसान गलत काम कर ही नहीं सकता।" किरण बेदी की तरह ही टी.एन. शेषन (1990-96 में भारत के मुख्य चुनाव आयुक्त) का निष्पक्ष चुनाव-प्रबंधन (जिसकी पूरी कहानी अध्याय 01, खंड 11.3 में है) भी सद्गुण-नीतिशास्त्र (Virtue Ethics) का जीवंत उदाहरण है।

📖 कहानी: "साहस का मध्य मार्ग" — तनाव की एक रात

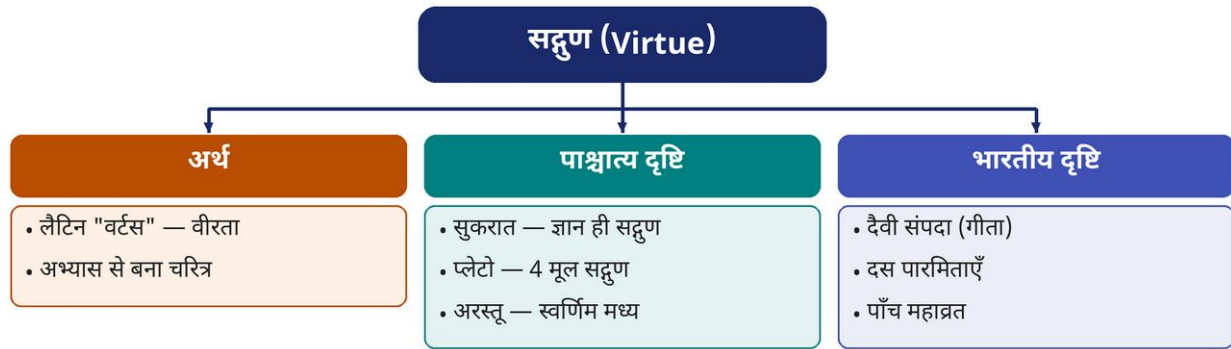
टोंक ज़िले के एक क़स्बे में **रणवीर** (काल्पनिक नाम) थानाधिकारी थे। एक शाम दो समुदायों के युवकों में मामूली कहासुनी हुई, जो देखते ही देखते अफ़वाहों के कारण तनाव में बदल गई। बाज़ार के चौक पर दोनों ओर से सैकड़ों लोग इकट्ठे हो गए। सोशल मीडिया पर एक पुराना, किसी और जगह का वीडियो "आज की घटना" बताकर फैलाया जा रहा था।

रणवीर के पास कुछ ही सिपाही थे। एक साथी अधिकारी ने सलाह दी — "भीड़ बहुत बड़ी है, हम पीछे हट जाते हैं, अतिरिक्त बल आने दो।" एक दूसरे सिपाही ने गुस्से में कहा — "सीधे लाठीचार्ज कर दो, डर जाएँगे।" रणवीर जानते थे कि पीछे हटना **कायरता** होगी — दुकानें जल सकती थीं और कोई निर्दोष मारा जा सकता था। पर बिना सोचे बल-प्रयोग करना **दुस्साहस** होता — इससे भीड़ और भड़कती और हालात हाथ से निकल जाते।

उन्होंने बीच का रास्ता चुना, जो सबसे कठिन था। वे बिना हथियार उठाए दोनों गुटों के बीच खड़े हुए, दोनों समुदायों के बुजुर्गों और धर्मगुरुओं को बुलाकर लाउडस्पीकर से शांति की अपील करवाई, और साथ ही अपनी टीम को सख्त निर्देश दिए कि जो भी हिंसा करे उसे तुरंत, पर नियम के अनुसार, हिरासत में लिया जाए। साइबर टीम ने उस भ्रामक वीडियो का सच 30 मिनट में सामने रखकर उसे फैलाने वाले खातों पर कार्रवाई की। दो घंटे में भीड़ छूट गई। किसी की जान नहीं गई, कोई दुकान नहीं जली। अगले दिन दोनों समुदायों की शांति समिति की बैठक हुई। रणवीर ने रिपोर्ट में अपने फैसलों के कारण लिखित रूप में दर्ज किए। ज़िला पुलिस अधीक्षक ने कहा — "साहस का अर्थ डर का न होना नहीं, बल्कि डर के बावजूद सही समय पर सही काम करना है।"

🔑 **इस कहानी से सीख:** अरस्तू का स्वर्णिम मध्य किताबी सिद्धांत नहीं, संकट की घड़ी का सबसे व्यावहारिक मार्गदर्शक है। साहस कायरता और दुस्साहस के बीच है; दृढ़ता कठोरता और ढिलाई के बीच है। यह संतुलन विवेक (व्यावहारिक बुद्धि) से आता है, और विवेक बार-बार के अभ्यास और अनुभव से — यही सद्गुण-नीतिशास्त्र का सार है।

सद्गुण — एक नज़र में



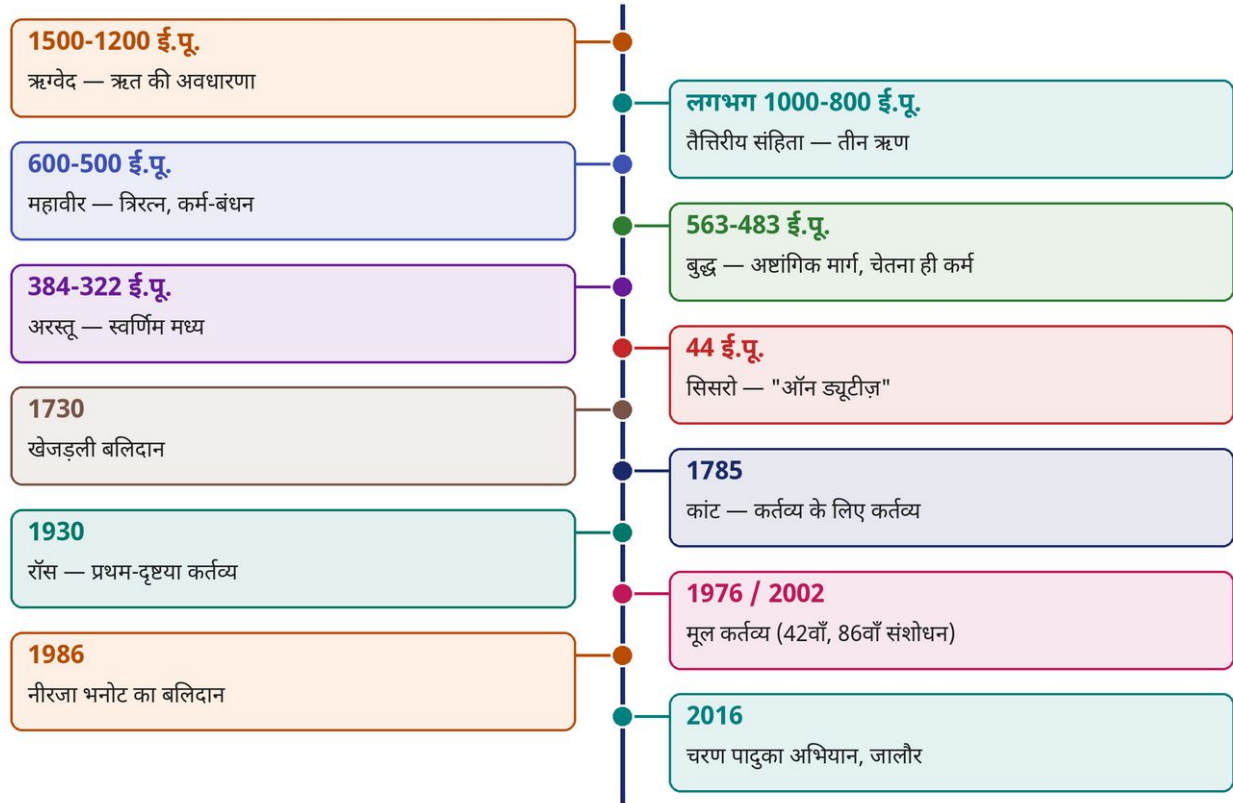
चित्र 2.21: सद्गुण — एक नज़र में

"सद्गुण एक माध्यम है" — इसका अर्थ: अरस्तू के स्वर्णिम मध्य (Golden Mean) सिद्धांत के अनुसार सद्गुण हमेशा दो अतियों — कमी और अधिकता — के बीच का संतुलन-बिंदु होता है; जैसे साहस, कायरता (कमी) और दुस्साहस (अधिकता) के बीच का माध्यम है। ऊपर रणवीर (थानाधिकारी) वाली कहानी दिखाती है कि यह संतुलन व्यवहार में भी संभव है।

9. ऋत, ऋण, कर्मवाद, कर्तव्य, शुभ एवं सद्गुण — ऐतिहासिक यात्रा

वर्ष / संदर्भ	विषय / घटना / विचारक
1500-1200 ई.पू.	ऋग्वेद — ऋत की अवधारणा का सबसे पहला उल्लेख। "ऋतस्य गोपा" = वरुण देवता।
1000-800 ई.पू.	तैत्तिरीय संहिता — 3 मूल ऋण (देव, ऋषि, पितृ) का उल्लेख।
600-500 ई.पू.	जैन धर्म — महावीर: 5 महाव्रत, तीन रत्न, संवर-निर्जरा से मोक्ष।
563-483 ई.पू.	बौद्ध धर्म — गौतम बुद्ध: अष्टांगिक मार्ग, प्रतीत्यसमुत्पाद, कर्मवाद।
428-348 ई.पू.	प्लेटो — चार मूल सद्गुण (विवेक, साहस, संयम, न्याय), सर्वोच्च शुभ की अवधारणा।
384-322 ई.पू.	अरस्तू — निकोमेकियन एथिक्स — "सद्गुण स्वर्णिम मध्य-मार्ग है।"
प्रथम सहस्राब्दी ईसवी (लगभग)	बाद के भारतीय ग्रंथों व परंपराओं में नृ ऋण व भूत ऋण जोड़कर पाँच ऋणों का विस्तृत रूप समझाया गया (सटीक स्रोत भिन्न-भिन्न व्याख्याओं में अलग-अलग बताए गए हैं)।
1730	खेजड़ली बलिदान (जोधपुर) — अमृता देवी बिश्नोई सहित 363 लोगों ने पेड़ों के लिए जान दी।
1724-1804	इमैन्युएल कांट — कर्तव्य के लिए कर्तव्य (Categorical Imperative), शुभ-संकल्प।
1748-1832	जेरेमी बेन्थम — उपयोगितावाद — अधिकतम लोगों का अधिकतम सुख।
1861-63	जॉन स्टुअर्ट मिल — गुणात्मक उपयोगितावाद (पहले 1861 में पत्रिका में, फिर 1863 में पुस्तक-रूप में प्रकाशित)।
1891-1956	डॉ. भीमराव आंबेडकर — "प्राचीन भारत में क्रांति और प्रतिक्रांति" (Revolution and Counter-Revolution in Ancient India) के "कृष्ण और उनकी गीता" (Krishna and His Gita) खंड में गीता व चातुर्वर्ण्य की आलोचना।
1934	बिहार-नेपाल भूकंप — गांधी-टैगोर बहस — प्राकृतिक आपदा और नैतिकता पर विमर्श।
1976	42वाँ संवैधानिक संशोधन — अनुच्छेद 51A में मूलतः 10 मूल कर्तव्य जोड़े गए।
1977	उच्चतम न्यायालय — राजस्थान राज्य बनाम भारत संघ (AIR 1977 SC 1361) — विधिक अधिकार, विधिक कर्तव्य के परस्पर-संबंधी हैं।
1982	किरण बेदी के कार्यकाल में एक गलत-पार्क कार पर कार्रवाई से "क्रेन बेदी" की लोकप्रिय पहचान बनी — संस्थागत नियम-समानता का उदाहरण।
2002	86वाँ संवैधानिक संशोधन अधिनियम — अनुच्छेद 51A में 11वाँ मूल कर्तव्य (6-14 वर्ष के बच्चों की शिक्षा से संबंधित) जोड़ा गया।
2016	डॉ. जितेन्द्र कुमार सोनी (जालौर, राजस्थान) — चरण पादुका अभियान — नृ ऋण का जीवंत उदाहरण।
2020	राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (NEP 2020) — ज्ञान-परंपरा व शिक्षक की भूमिका पर बल, जिसे 'ऋषि ऋण' की आधुनिक नैतिक व्याख्या के रूप में देखा जा सकता है।
2023	डॉ. शीला असोपा व आशा रानी सुमन (राजस्थान) — राष्ट्रीय शिक्षक पुरस्कार — ऋषि ऋण की मिसाल।

ऋत से सद्गुण तक — ऐतिहासिक यात्रा



चित्र 2.22: ऋत से सद्गुण तक — ऐतिहासिक यात्रा

☀ अध्याय का सार — एक पंक्ति में

ऋत हमें बताता है कि सही क्या है, ऋण हमें बताता है कि हमें कर्तव्य क्यों निभाना चाहिए, कर्मवाद हमें याद दिलाता है कि हर काम का परिणाम तय है, कर्तव्य और शुभ हमें रास्ता दिखाते हैं, और सद्गुण उस रास्ते को हमारी स्थायी आदत बना देता है। डॉ. जितेन्द्र कुमार सोनी के चरण पादुका अभियान से लेकर खेजड़ली के 363 बलिदानों तक — हर कहानी यही सिखाती है कि ये अवधारणाएँ किताबी शब्द नहीं, बल्कि रोज़मर्रा के फैसलों की बुनियाद हैं।

बोनस: उत्तर-लेखन अभ्यास (मॉडल प्रश्न और उत्तर)

प्रश्न 1: "भारतीय परंपरा में 'ऋण' की अवधारणा पर प्रकाश डालिए।"

उत्तर: वैदिक नीतिशास्त्र में ऋण का अर्थ है — नैतिक दायित्व। मान्यता है कि हर व्यक्ति जन्म से ही कुछ ऋणों के साथ पैदा होता है, क्योंकि उसे जीवन, ज्ञान, परिवार और प्रकृति से बहुत कुछ निःशुल्क प्राप्त हुआ है।

पाँच ऋण और उनका प्रशासनिक महत्व:

- ◆ **देव ऋण:** प्रकृति के प्रति कृतज्ञता — नमामि गंगे जैसे पर्यावरण-संरक्षण अभियान इसी भावना से प्रेरित हैं।
- ◆ **ऋषि ऋण:** ज्ञान के प्रति कृतज्ञता — डॉ. शीला असोपा व आशा रानी सुमन जैसे शिक्षकों का ग्रामीण बच्चों को शिक्षित करना इसका जीवंत उदाहरण है।
- ◆ **पितृ ऋण:** पूर्वजों और माता-पिता के प्रति कृतज्ञता — पुष्कर में पिंडदान की परंपरा इसका प्रतीक है, और आज के संदर्भ में बुजुर्ग माता-पिता की सेवा तथा परिवार के अच्छे मूल्यों को आगे बढ़ाना इसी ऋण को चुकाना है।
- ◆ **नृ ऋण:** मानवता के प्रति कृतज्ञता — डॉ. जितेन्द्र कुमार सोनी का चरण पादुका अभियान, जिसने लाखों गरीब बच्चों को जूते उपलब्ध कराए।
- ◆ **भूत ऋण:** प्रकृति व जीवों के प्रति कृतज्ञता — 1730 में खेजड़ली (जोधपुर) में अमृता देवी सहित 363 बिश्नोई लोगों ने पेड़ों को बचाने के लिए जान दे दी; प्रशासन में वन-संरक्षण और प्रदूषण-नियंत्रण इसी ऋण की आधुनिक अभिव्यक्ति हैं।

निष्कर्ष: ऋण की अवधारणा एक प्रशासक को यह सिखाती है कि सत्ता और संसाधन उसे "अधिकार" के रूप में नहीं, बल्कि समाज के प्रति एक "उधार" के रूप में मिले हैं, जिसे सेवा के ज़रिए चुकाना ही उसका असली कर्तव्य है।

प्रश्न 2: "'शुभ' की अवधारणा एक अच्छे प्रशासन की संरचना में कैसे सहायक होगी?"

उत्तर: "शुभ" वह है जो हमारे लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक हो। नीतिशास्त्र में इसके दो रूप हैं — सापेक्ष शुभ (साधन) और निरपेक्ष शुभ (साध्य)।

प्रशासन में शुभ की भूमिका:

- ◆ **सापेक्ष शुभ के रूप में नियम-कानून:** अच्छे कानून, नीतियाँ और प्रक्रियाएँ स्वयं अंतिम लक्ष्य नहीं, बल्कि जन-कल्याण पाने का साधन हैं — जैसे संविधान।

◆ **निरपेक्ष शुभ के रूप में जन-कल्याण:** प्रशासन का अंतिम लक्ष्य (साध्य) है — नागरिकों की खुशहाली, गरिमा और न्याय। कोई भी नीति इसी अंतिम लक्ष्य की कसौटी पर परखी जानी चाहिए।

◆ **कांट का शुभ-संकल्प:** एक प्रशासक की नीयत (Intention) साफ होनी चाहिए — सिर्फ नियम का पालन दिखावे के लिए नहीं, बल्कि सच्ची भावना से जन-सेवा के लिए हो।

◆ **संतुलन ज़रूरी:** अगर सिर्फ साधन (नियम) पर ज़ोर दिया जाए और साध्य (जन-कल्याण) भुला दिया जाए, तो प्रशासन नियम-केंद्रित (Rule-centric) होकर संवेदनहीन हो जाता है — जैसे डॉ. जितेन्द्र कुमार सोनी अगर सिर्फ "नियमानुसार रिपोर्ट भेजना" ही अपना काम मानते, तो चरण पादुका अभियान कभी शुरू ही नहीं होता।

निष्कर्ष: एक अच्छा प्रशासन वही है जो सापेक्ष शुभ (कुशल नियम-व्यवस्था) और निरपेक्ष शुभ (सच्चा जन-कल्याण) — दोनों के बीच संतुलन बनाए रखे, न कि सिर्फ एक पर टिका रहे।

